प्रकरण बत्तीस

भारत : नाचते सफेद हाथी

कलकत्ता
अगस्त २९, १९७०

लगभग तीन वर्ष बाद प्रभुपाद पहली बार भारत लौटे और अपने घर, कलकत्ता पहुँचे। यद्यपि देर हो गई थी और टोकियो से यात्रा में बारह घंटे लगे थे, हवाई जहाज की सीढ़ियों से नीचे उतरते हुए प्रभुपाद को प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था। भारत में उनके दोनों अमेरिकन शिष्य, अच्युतानन्द और जयपताक हवाई अड्डे पर खड़े थे और रेशमी गेरुए वस्त्रों में प्रभुपाद को अपनी ओर आते हुए देखकर उन्होंने उन्हें नमस्कार किया। प्रभुपाद मुसकराए और उन्होंने उनका आलिंगन किया। वे प्रभुपाद को फूलों से सजी एक कार में ले गये और उनके साथ हवाई अड्डे के सीमावर्ती भवन पहुँचे, जहाँ प्रभुपाद विशिष्ट विश्राम-कक्ष में प्रविष्ट हुए।

प्रभुपाद के कुछ गुरु-भाई और कलकत्ता के पुराने मित्र उनके स्वागत के लिए वहाँ उपस्थित थे और चैतन्य मठ का एक कीर्तन-दल कीर्तन कर रहा था। प्रभुपाद का स्वागत विशाल और आनन्दमय था। जिस समय कक्ष हरे कृष्ण की गूँजों से परिपूर्ण हो गया, प्रभुपाद ने अपना आसन ग्रहण किया। प्रभुपाद की दिव्य उपस्थिति, कीर्तन की ध्वनि, अगरबत्ती एवं चमेली की सुंगध और कृष्ण के अनेक चित्र नीरस हवाई अड्डे को स्वर्गीय दृश्य का रूप दे रहे थे।

प्रभुपाद के गले में फूलों की मालाएँ पहनाने के लिए भारतीय भक्त आगे बढ़ते रहे और जब मालाओं से उनका गला भर जाता था, तब वे उन्हें उतार देते थे। लेकिन मालाओं का पहनाया जाना जारी रहा और उनका ढेर लगता गया, प्रभुपाद का चेहरा तक उससे करीब-करीब ढक गया। जब बंगाली ब्रह्मचारी अपने मृदंग अद्‌भुत लय के साथ बजा रहे थे, तब अमेरिकन भक्त उन्हें भावविभोर होकर देख रहे थे। प्रभुपाद के पैर छूने और उनका आशीर्वाद लेने के लिए भीड़ में खड़े लोग धक्कमधक्का कर रहे थे। प्रभुपाद मुसकरा रहे थे और प्रसन्न लग रहे थे। जब कीर्तन समाप्त हुआ, तब वे बोलने लगे।

"मैं नगर में तीन वर्ष बाद आया हूँ। हरे कृष्ण। मैं संसार-भर घूम आया हूँ और मैंने देख लिया है कि भौतिक उन्नति से इस संसार में सुख और शान्ति की स्थापना नहीं हो सकती। मैंने जापान देखा है, जो मशीनों और प्रौद्योगिकी में बहुत आगे है। तो भी वहाँ वास्तविक सुख-चैन नहीं है। किन्तु भारत के लोगों को, यद्यपि वे संकीर्तन की अर्थवत्ता नहीं समझते, कीर्तन सुनने में आनन्द आता है। भारतीयों को मेरा यह परामर्श है कि यदि बिना हरि नाम पर ध्यान दिए हुए, तुम केवल विज्ञान और प्रौद्योगिकी में आगे बढ़ते हो, तो तुम हमेशा पीछे रहोगे। हरि नाम में अपार शक्ति है..."

संवाददाता : "आपने कहा है और मैं आपके कथन को उद्धृत कर रहा हूँ, 'साम्यवाद भी, यदि वह बिना कृष्ण-नाम के है, तो वह बेकार है।' आप ऐसा क्यों कहते हैं ?"

प्रभुपाद : "आप विशेष रूप से साम्यवाद का नाम क्यों ले रहे हैं? बिना कृष्णभावनामृत के हर चीज बेकार है। आप जो भी करें, कृष्ण को केन्द्र में रखें। आप चाहे साम्यवादी हों, पूँजीवादी हों, या जो भी हों, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। हम यह देखना चाहते हैं कि आपके कार्यकलाप कृष्ण के इर्द-गिर्द हैं या नहीं।"

संवाददाता : "इस समय बंगाल में बहुत अधिक अशान्ति है। आपका हम लोगों को ऐसे समय में क्या परामर्श है ?"

प्रभुपाद : "मेरा परामर्श है कि हरे कृष्ण का कीर्तन करो। यह परामर्श साम्यवादियों और पूँजीपतियों दोनों वर्गों को है। इससे उनके बीच का वैमनस्य पूर्णतया समाप्त हो जायेगा और यदि वे इस परामर्श को स्वीकार करते हैं, तो उनकी सभी समस्याएँ हल हो जायेंगी।

जन-समूह प्रभुपाद के शब्दों का समर्थन करते हुए चिल्लाने लगा, "साधु! साधु!"

• • •

हवाई अड्डे से हिन्दुस्तान रोड स्थित श्रीमान् दास गुप्त के मकान को जाते समय प्रभुपाद कार की पिछली सीट पर बैठे थे। कार की खिड़की से कलकत्ता के सुपरिचित दृश्य दिखाई दे रहे थे। किन्तु उनके साथ बैठे हुए नवागन्तुकों के लिए कलकत्ता विदेशी और अपरिचित था। इधर-उधर घूमती मरियल गाएं और आवारा कुत्ते, भारी बोझ खींचते लघु-काय घोड़े, नंगे-पैर रिक्शा-वाले, विचित्र खाद्यों वाली खुली दुकानें, पैदल चलने वालों की भारी भीड़ें, उमसदार गरमी, और विश्वासातीत यातायात—ये सभी वस्तुएँ यद्यपि प्रभुपाद के लिए सुपरिचित थीं, पर उनके शिष्यों के लिए, जो उनके साथ हवाई-यात्रा करके आये थे, सांस्कृतिक झटका देने वाली साबित हुई। तमाल कृष्ण भयग्रस्त होकर कार

के ड्राइवर को देख रहा था, जो हार्न बजाता हुआ कार को यातायात में से इधर-उधर घुमाकर निकाल रहा था। प्रभुपाद थोड़ा मुसकराकर बोले, "तमाल कृष्ण, तुम्हें इस प्रकार कार का चलाना कैसा लग रहा है?"

पर अच्युतानन्द और जयपताक कलकत्ता से परिचित हो चुके थे और उसकी संस्कृति उन्हें पसन्द आने लगी थी। वे अभिजात वर्ग के सुसंस्कृत बंगालियों से मिले थे, जो उनके अमेरिकन होने के बावजूद उन्हें साधु स्वीकार करते थे। वे बहुत-से घरों में धर्मोपदेश कर चुके थे और अपने सार्वजनिक कीर्तन से उत्सुक जन-समूह को अपनी ओर आकृष्ट कर चुके थे। लेकिन अभी तक वे इस्कान का पैर दृढ़ता से नहीं जमा सके थे। पर अब उस स्थिति को बदलने के लिए प्रभुपाद आ गये थे। वे विस्मयकारी ढंग से धर्मोपदेश करेंगे, जैसाकि उन्होंने अमेरिका में किया था और उनके शिष्य उनके साधनों के रूप में उनकी सेवा करने को उत्सुक थे। प्रभुपाद शिष्यों के लिए जीवन्त शक्ति और प्रेरणा बनेंगे, क्योंकि वे भगवान् चैतन्य द्वारा शक्ति-प्रदत्त थे।

प्रभुपाद श्रीमान् दास गुप्त के घर आधी रात के करीब पहुँचे। बहुत-से लोग उनसे मिलना चाहते थे और जब देवानन्द महाराज ने उन्हें वापस भेजने की कोशिश की तो प्रभुपाद ने कहा, "नहीं, उन्हें अन्दर आने दो।" प्रभुपाद की बहिन, भवतरिणी, बहुत-से विशेष व्यंजन लेकर आ गई, जिन्हें उसने तैयार किया था।

"हम इस समय खा नहीं सकते," एक संन्यासी ने आपत्ति की, "रात बहुत बीत चुकी है।"

"नहीं," प्रभुपाद बोले, "हमें हर चीज खानी है। जो कुछ भी मेरी बहिन ने तैयार किया है, उसे हमें खाना है। यह उसका प्रिय कार्य है। वह मेरे लिए भोजन बनाना और मुझे खिलाना पसन्द करती है। हर एक को प्रसाद ग्रहण करना है।" चैतन्य मठ के भक्तों ने भी भोजन तैयार किया था और जब प्रभुपाद अपनी बहिन द्वारा बनाए गये व्यंजन खा रहे थे, तभी चैतन्य मठ से भी प्रसाद आ गया। उन्होंने उसमें से थोड़ा सा लिया और अपने अनुयायियों को जी-भर खाने को प्रोत्साहित किया।

• • •

रात का एक बजा था। प्रभुपाद अपने कमरे में अच्युतानन्द, जयपताक और देवानन्द महाराज के साथ बैठे थे। उन्होंने बताया कि उनके भारतीय शिष्यों के अदायित्वपूर्ण पत्रों से गुरु महाराज के पद के सम्बन्ध में इस्कान में किस प्रकार गहरी भ्रान्ति पैदा हो गई थी। उन्होंने *साक्षात् धरित्वेन समस्त शास्त्रैः* श्लोक उद्धृत किया और व्याख्या की कि : "गुरु का स्थान परमात्मा के समान है। वह परमात्मा नहीं है, परन्तु वह परमात्मा का सर्वाधिक

प्रिय सेवक है।"

प्रभुपाद अपने शिष्यों को धर्मोपदेश देते रहे और गुरु के स्थान के विषय में भ्रान्तियों का निराकरण करते रहे। उन्होंने कहा कि पहले की सारी अप्रिय घटनाओं का सुधार किया जा रहा था। भक्तों को चाहिए कि वे मिलकर नये उत्साह और स्फूर्ति के साथ काम करें।

अच्युतानन्द ने प्रभुपाद से पूछा कि क्या वह संन्यास ले सकता था। उसने कहा कि भारत के लोग संन्यासी का अधिक आदर करेंगे। प्रभुपाद सहमत हुए कि संन्यास लेने से अच्युतानन्द को धर्मोपदेश कार्य में सहायता मिलेगी और उन्होंने कहा कि जयपताक को भी संन्यास ले लेना चाहिए। यह समारोह एक सप्ताह में राधाष्टमी के दिन होना तय हुआ।

अमृत बाजार पत्रिका ने प्रभुपाद के आगमन के सम्बन्ध में समाचार अपने मुख-पृष्ठ पर छापा। एक चित्र में दिखाया गया कि प्रभुपाद अपना एक हाथ माला की थैली में डाले चल रहे हैं और उनके युवा संन्यासी डंडे लिए उनके साथ चल रहे हैं।

> पहले भी बहुत-से वरिष्ठ जन दमदम हवाई अड्डे पर आ चुके हैं, लेकिन इस स्तर का उल्लास और समारोह पहले कभी नहीं देखा गया।... यह कल्पना करना कठिन था कि वे ७५ वर्ष के थे, क्योंकि इतनी लम्बी यात्रा के बाद भी वे बिल्कुल तरोताजा लगते थे। चेहरे पर मंद मुसकान के साथ उन्होंने 'हरि बोल' शब्द के साथ हर एक को आशीर्वाद दिया।

प्रभुपाद ने जापान के शिष्यों को लिखा,

> भारत में जिस क्षण हम हवाई जहाज से उतरे उसी क्षण से प्रचार कार्य अच्छी तरह चल रहा है... ब्रूस आगे बढ़ रहा है और उसका मन लगने लगा है। अब उसने अपने बाल कृष्ण को अर्पित कर दिए हैं। यह एक अच्छा लक्षण है।

• • •

कलकत्ता राजनीतिक हलचलों में डूबा था। साम्यवादी आतंकवादियों का एक दल, जिसे नक्सलवादी कहते थे, दंगे कर रहा था, प्रसिद्ध व्यवसायियों की हत्या कर रहा था और अन्यों की जान लेने की धमकी दे रहा था। बहुत धनी मारवाड़ी उद्योगपति कलकत्ता छोड़कर दिल्ली और बम्बई जा रहे थे। आतंकवादियों के अतिरिक्त कालेजों के बंगाली लड़के भी अनुशासनहीन हो रहे थे। लेकिन पश्चिमी बंगाल के वयोवृद्ध, जिनमें से अधिकतर लोग प्रभुपाद से मिलने आते थे, इस हिंसा और अशान्ति से चिन्तित थे। प्रभुपाद

ने उन्हें बताया कि एकमात्र शरण कृष्ण थे।

> लोग बहुत चिन्ताकुल हैं। सभी की अपेक्षा है कि स्थिति में सुधार लाने के लिए मैं कुछ करूँ। किन्तु मेरा उपदेश केवल यह है कि हरे कृष्ण का कीर्तन करो, क्योंकि यह दिव्य ध्वनि सभी भौतिक रोगों की ओषधि है।

प्रभुपाद को इसकी आवश्यकता नहीं प्रतीत होती थी कि कलकत्ता की सामाजिक समस्यायों के लिए कोई विशेष कार्यक्रम बनाया जाये। हरे कृष्ण कीर्तन ही सारे "भौतिक रोगों की ओषधि" थी। प्रश्न यह था कि वे भारतीयों को यह औषधि देने के लिए अपने अमरीकी शिष्यों का उपयोग कैसे करें। उनके पास दस भक्तों का दल था और पश्चिम के अपने नेताओं से उन्होंने एक महीने के अन्दर बीस अधिक भक्तों की माँग की थी। दाई निप्पान से उन्होंने साठ हजार डालर की पुस्तकें और पत्रिकाएँ मँगाई थी और उनके संन्यासी सड़कों में नित्य कीर्तन करने जाते थे।

संकीर्तन दल का अच्छा स्वागत हो रहा था। बंगालियों के लिए यह बहुत भावोत्तेजक था कि मुंडित मस्तक पश्चिम-निवासी शिखा-धारण किये हुए, वैष्णव तिलक लगाए हुए और केसरिया वस्त्र पहने हुए, करताल और मृदंग बजाते हुए, जी-जान से हरे कृष्ण कीर्तन कर रहे थे, *भगवद्गीता* से श्लोक उद्‌धृत कर रहे थे और भगवान् कृष्ण को परमेश्वर घोषित कर रहे थे। बंगालियों के लिए यह बात उत्तेजनात्मक थी और सैकड़ों बंगाली ऐसे दृश्य देखने को एकत्र होते थे। प्रभुपाद जानते थे कि उनके शिष्य गहरा प्रभाव उत्पन्न करेंगे; हर एक उन्हें देखना चाहेगा। इसलिए उन्होंने प्रेमवश अपने इन शिष्यों को 'नाचते सफेद हाथी' कहा।

ये वही भक्त थे, जो सैन फ्रांसिस्को, लास ऐंजिलेस और न्यूयार्क की सड़कों में प्रेमपूर्वक हरे कृष्ण कीर्तन करते थे। अब वे हर दिन कई घंटे डैलहौजी स्क्वायर कलकत्ता में ऐसी थकाने वाली गरमी में कीर्तन कर रहे थे जिसका सामना उन्होंने अमेरिका में कभी नहीं किया था। जन-समूह धक्कमधक्का करके उनके पास तक पहुँच जाता, कभी उन्हें चिढ़ाता हुआ, कभी हँसता हुआ या कभी व्यंग्य करता हुआ, किन्तु अधिकतर गहरे विस्मय से उन्हें देखता हुआ।

प्रभुपाद का विचार था कि जब भारतीय लोग इन युवा पश्चिम निवासियों को कृष्णभावनामृत के सिद्धान्तों को अपनाते देखेंगे, तो अपनी निज की संस्कृति में उनका विश्वास बढ़ेगा। प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को बताया कि किस प्रकार पहले, युधिष्ठिर महाराज के समय में भारत कृष्णभावनामृत का देश था। लेकिन गत एक हजार वर्षों से

भारत विदेशी शासन के अधीन था, पहले मुगलों के और उसके बाद अंग्रेजों के। परिणामस्वरूप, बुद्धिजीवी वर्ग ने और, उससे कम हद तक, सामान्य जनता ने अपनी संस्कृति के प्रति सम्मान खो दिया था। अब वे पश्चिम के भौतिक लक्ष्यों के अनुसरण में लगे थे और वे उसे धर्म की अपेक्षा अधिक लाभदायक और अधिक व्यावहारिक समझने लगे थे। लेकिन यह भावुकता मात्र थी।

प्रभुपाद अच्छी तरह जानते थे कि पाश्चात्यों के संन्यासी वैष्णवों के रूप में रहने का भारतीयों के मस्तिष्कों और हृदयों पर प्रभाव पड़ेगा और उससे उन्हें अपनी भूली हुई संस्कृति में पुन: आस्था प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। यह कोई सांसारिक चाल नहीं थी, प्रत्युत आध्यात्मिक शक्ति थी। प्रभुपाद ने बल दिया कि भक्तों को अपने कार्यों में शुद्ध रहना चाहिए और यही शुद्धता उनकी शक्ति होगी।

डैलहौजी स्क्वायर और चौरंगी में कीर्तन करीब दस दिन चला था, तब प्रभुपाद ने उसे बन्द करने का निर्णय लिया। उन्होंने कहा कि सड़कों में कीर्तन, यद्यपि धर्म-प्रचार का बहुत उत्तम तरीका था, भारत के लिए सर्वाधिक प्रभावकारी ढंग नहीं था। बंगाल में इस तरह के बहुत-से व्यावसायिक कीर्तन-दल थे और प्रभुपाद नहीं चाहते थे कि उनके शिष्यों को भी लोग उन दलों की तरह व्यावसायिक कीर्तनकारी या भिक्षुक समझें। वे चाहते थे कि उनके शिष्य इस तरह धर्म-प्रचार करें कि वे अधिक बुद्धिजीवी और सम्मान्य भारतीयों के निकट पहुँच सकें। उन्होंने अपनी नयी योजना प्रकट की।

उन्होंने उस योजना को "आजीवन सदस्यता" कहा। उनके शिष्य ऐसे भारतीयों को जो इस्कान के समर्थन में रुचि रखते थे और उससे सम्बन्धित होना चाहते थे, सदस्य बनने के लिए आमंत्रित करने लगे। १,१११ रुपए की सदस्यता प्राप्त कर लेने से व्यक्ति अनेक लाभ पाने का अधिकारी हो जाता था, यथा श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों की प्राप्ति और संसार-भर में इस्कान के केन्द्रों में नि:शुल्क आवास।

एक दिन संध्या-समय किसी के निजी घर पर धनी व्यवसायियों के एक दल के सामने बोलते हुए प्रभुपाद ने आजीवन सदस्यता की अपनी योजना उद्धारित की। व्याख्यान के बाद उन्होंने श्रोताओं को इस्कान के आजीवन सदस्य बनने को आमंत्रित किया, और कलकत्ता के कई व्यापारियों ने तुरन्त हस्ताक्षर कर दिए।

बी.एल. जाजू : *मैं प्रभुपाद के सरल स्वभाव से वास्तव में अभिभूत था। उन्होंने मुझे बताया कि वे किस प्रकार अपना नियमित धंधा चला रहे थे. जबकि उनके गुरु ने उनसे कहा कि चार सौ वर्ष पहले चैतन्य महाप्रभु ने कहा था कि हरे राम, हरे कृष्ण का कीर्तन समस्त संसार में व्याप्त होगा। उन्होंने बताया कि यही कार्य था, जो उनके गुरु महाराज ने उन्हें सौंपा था और उसके लिए उन्हें अमेरिका जाना होगा और उसे करना होगा।*

मैंने उनमें कोई दंभ नहीं पाया। वे बहुत सरल थे। वे मुझे इस तरह बता रहे थे, मानो मेरे भाई मुझसे बता रहे हों कि वे संयुक्त राज्य अमेरिका कैसे गये, उन्होंने कार्य कैसे आरम्भ किया और किस प्रकार धीरे-धीरे कृष्णभावनामृत का प्रसार सारे संसार में करने के लिए उन्होंने योजना बनाई।

उन शिष्यगण, जिन्होंने अपना जीवन बदल दिया है, उन्हें देखकर मैं सोचने लगा, "मैं भी ऐसा क्यों नहीं कर सकता? अपने विनम्र ढंग से मुझे कुछ करना चाहिए, बिना इस बात की चिन्ता किये कि अन्य लोग क्या करते हैं।" मैंने पाया कि अप्रत्यक्ष ढंग से वे मेरे जीवन को प्रभावित कर रहे थे। मेरी पत्नी और मेरे पुत्र सचमुच आश्चर्यचकित थे, जब उन्होंने देखा कि ये श्वेत लोग, जिनके बारे में वे सोचते थे कि वे कभी भी कृष्णभावनामृत की ओर उन्मुख नहीं होंगे, इतने अधिक बदल गये थे। इसलिए हमने सोचा कि हमें भी गीता के उपदेश का अच्छी तरह अनुगमन करना चाहिए।

• • •

प्रभुपाद जहाँ भी बोलते, वे *भगवद्गीता* या *श्रीमद्भागवत* के आधार पर कृष्ण और कृष्णभावनामृत की बात करते, चाहे वे किसी आजीवन सदस्य के घर पर बोल रहे होते, या बड़ी संख्या में श्रोताओं के सामने किसी औपचारिक व्याख्यान में, या स्वयं अपने कमरे में। उन्हें ऐसा करते हुए कभी थकान न होती। कोई अतिथि उनसे प्रश्न पूछता और प्रभुपाद उसका उत्तर अपने शिष्यों से *गीता* का एक संबद्ध श्लोक पढ़वाकर आरम्भ करते, तब वे उसकी व्याख्या करते। यदि प्रश्नकर्ता उनकी व्याख्या को स्वीकार न करता और उन्हें चुनौती देना चाहता, तब वे अपना तर्क देते।

अपनी नीची डेस्क के पीछे बैठे हुए और समय-समय पर अपने लोटे से जल पीते हुए प्रभुपाद घंटो बात करते रहते। तापमान बढ़कर १०० डिग्री हो जाता, फिर भी प्रभुपाद अपने कमरे में बैठे धर्मोपदेश करते रहते। वे कुर्ता या कमीज न पहनते, केवल उत्तरीय सादा वस्त्र धारण करते, जिससे उनकी बाहें, कंधे और छाती का कुछ भाग खुला रहता। उनके साथ बैठे भक्त कभी-कभी अस्वस्थ हो जाते या उन्हें नींद आने लगती या उनका ध्यान भटक जाता, और कभी-कभी बहाना करके वे चले जाते। घंटों बाद लौटकर वे देखते कि प्रभुपाद उस समय भी धर्मोपदेश कर रहे हैं। मेहमान भी आते-जाते रहते। तो भी, भोजन के बाद एक झपकी लेने के अतिरिक्त, प्रभुपाद प्राय: दिन-भर और रात में देर तक धर्मोपदेश करते रहते। अपनी विषयवस्तु से वे कभी भी ऊबते नहीं और वे तब तक बोलते रहते, जब तक कोई रुचि लेने वाला श्रोता वहाँ बैठा रहता।

उनके श्रोता तरह-तरह के थे। कभी वे ऐसे कमरे में बोलते, जो पतियों और पत्नियों

से भरा होता और वे सभी सुसंस्कृत और सुन्दर वेश-भूषा में होते। कभी वे एकाकी वृद्ध व्यक्ति से बात करते होते। कभी उनके श्रोता शान्तिपूर्वक उनकी बात सुनते, या कभी वे तर्क-वितर्क करते, या कभी उनके वक्तव्य की प्रशंसा करते हुए भी श्रोता अपनी गलतफहमी का परिचय देते। कभी कोई मेहमान उनसे पूछ बैठता कि वे बंगाल के प्रसिद्ध संतों और राजनीतिज्ञों की आलोचना क्यों करते थे, और *भगवद्गीता* के आधार पर वे व्याख्या करके बताते कि वास्तविक साधु वह है, जो हमेशा कृष्ण की महिमा का गान करे।

प्रभुपाद अपना धर्मोपदेश प्रायः ऐसी विशेष रुचि वाली घटनाओं से जोड़कर करते थे, जैसे कलकत्ता की राजनैतिक हलचल या वैदिक संस्कृति का पतन। फिर भी, स्थानीय मामलों से उनका सम्बन्ध केवल तात्कालिक व्यावहारिक आवश्यकता के कारण था, क्योंकि वे भारत से परे थे। वे संसार-भर के लोगों, स्थानों और कार्यकलापों के बारे में सोच रहे थे। पत्रों का उत्तर देते हुए वे गम्भीरता से इंगलैंड, आस्ट्रेलिया, हवाई या न्यू वृन्दावन के मामलों को ध्यान में रखते। और इन सबके परे, वे हमेशा कृष्ण के बारे में सोचा करते। वे कृष्ण की महिमा को सारे संसार में फैलाना चाहते थे; यह संयोग था कि भारत उनका वर्तमान कार्य-क्षेत्र था।

भारत के भक्तों को प्रभुपाद को धर्मोपदेश करते निकट से देखने का सौभाग्य मिला था। वे उनकी श्रेष्ठ सहिष्णुता और दयालुता से प्रेरणा ग्रहण करते थे और उनकी तुलना में अपनी कमियों पर विचार करते थे। भारत में नवागन्तुकों के रूप में भक्त अब भी कलकत्ता में जीवन-यापन के व्यावहारिक मामलों में उलझे हुए थे। यहाँ का मौसम, बीमारी और सांस्कृतिक झटका उनका ध्यान कृष्णभावनामृत से हटा रहे थे। किन्तु प्रभुपाद की उपस्थिति, उनका धर्मोपदेश और उनका दृष्टान्त—ये सब उन्हें याद दिला रहे थे कि वास्तविकता भौतिक शरीर से परे थी।

कभी-कभी भक्त-जन प्रभुपाद के कुछ दर्शनार्थियों की आलोचना करते थे। उनकी भेंट ऐसे भारतीयों से होती थी, जो प्रभुपाद के पास बैठते थे, ईश्वर परायणता का दिखावा करते थे और बाद में सिगरेट पीते थे और ओछे चरित्र के अन्य लक्षण प्रकट करते थे। एक बार भक्तों के एक दल ने प्रभुपाद से ऐसे पाखंडी भारतीयों की शिकायत की, पर प्रभुपाद ने उन्हें मधुमक्खी और मक्खी की कहानी सुनाई। मधुमक्खी हमेशा मधु की खोज में रहती है, उन्होंने कहा, और मक्खी किसी सड़े-गले घाव या विकृति के पीछे रहती है। भक्तों को मधुमक्खी की तरह होना चाहिए और दूसरों के अच्छे गुणों को देखना चाहिए, मक्खी की तरह नहीं, जो हमेशा दोषों के पीछे रहती है।

प्रभुपाद के शिष्यों ने पाया कि भारत में रहना सीखने का सर्वोत्तम उपाय यह था कि जो कुछ प्रभुपाद करें, उसका ठीक-ठीक अनुसरण किया जाये। किसी के घर में प्रभुपाद

के साथ प्रसाद ग्रहण करते समय वे वही खाना खाते और उसी तरीके से खाते, जो प्रभुपाद अपनाते। जब वे समाप्त करते तो शिष्य भी समाप्त कर देते; और जब वे हाथ धोते, तो वे भी अपने हाथ धोते। भारत में जीवन विचित्र था, वह हक्का-बक्का कर देने वाला था, और शिष्यों को भारत में प्रभुपाद के मिशन के दृष्टिकोण का कोई ज्ञान नहीं था। लेकिन, प्रभुपाद जहाँ भी जाते, वे छोटी बत्तखों की तरह उनका अनुगमन करते।

ज्यों-ज्यों भक्त-जन प्रभुपाद के अधिक निकट आते गये और उनके अनुपम गुणों को देखते गये, उनका प्रेम उनके लिए बढ़ता गया। अपने कमरे में सफेद गद्दी पर बैठे हुए और सफेद मसनद पर पीछे की ओर झुके हुए प्रभुपाद कमरे की सादी सजावट के बावजूद स्वर्णिमा-युक्त और राजोचित दिखाई देते थे। भक्त देख सकते थे कि प्रभुपाद पर उनके परिसर का कोई असर नहीं था, चाहे वे लास ऐंजिलेस में हों, जहाँ वे बड़ी सुविधा और सम्पन्नता में रहे थे या कलकत्ता में हों। भारत में वे सुखी थे, लेकिन वे किसी अन्य भारतीय की तरह नहीं थे; वे किसी अन्य भारतीय साधु की तरह भी नहीं थे। वे अनुपम थे। और वे उनके थे।

• • •

कलकत्ता पहुँचने के पहले दिन से प्रभुपाद भगवान् चैतन्य के पवित्र जन्म-स्थान, मायापुर जाने की बाबत सोचते रहे थे। श्रील प्रभुपाद के आध्यात्मिक गुरु के पिता, भक्तिविनोद ठाकुर जो भगवान् चैतन्य की शिक्षाओं को भारत के बाहर के देशों में फैलाने में अग्रगामी थे, उस दिन की अभिलाषा करते थे, जब अमेरिकन और योरोपियन शिष्य मायापुर में अपने बंगाली गुरु-भाइयों के साथ मिलकर पवित्र नामों का कीर्तन करेंगे। प्रभुपाद जमीन खरीदकर अपने पाश्चात्य शिष्यों के लिए मायापुर केन्द्र स्थापित करना चाहते थे और अपने पूर्ववर्ती गुरु-भाइयों के स्वप्न को साकार करना चाहते थे। उन्होंने अपने एक गुरु-भाई को लिखा था।

> मैं अपने प्रिय आध्यात्मिक गुरु कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए मायापुर जाना चाहता हूँ, और इसलिए भी कि वहाँ जमीन की खरीददारी पूरी कर सकूँ। इसलिए यदि जगमोहन प्रभु इस सौदे को पूरा करने के लिए हमारे साथ जा सकें, तो यह उनकी कृपा होगी और मुझे आशा है कि आप कृपापूर्वक उनसे प्रार्थना करेंगे कि वे हमारे साथ जायें।

भगवान् चैतन्य के अनुयायी मायापुर का तादात्म्य वृन्दावन से करते हैं, जो कलकत्ता के उत्तर में ११० मील की दूरी पर स्थित है। पाँच हजार वर्ष पूर्व भगवान् कृष्ण वृन्दावन में रहते थे और वहाँ उन्होंने अपनी बाल-लीलाएँ की थीं, और पाँच सौ वर्ष पूर्व भगवान् कृष्ण मायापुर में भगवान् चैतन्य के रूप में प्रकट हुए। अतएव गौड़ीय वैष्णवों के लिए वृन्दावन और मायापुर संसार में दो सर्वाधिक प्रिय और पवित्र स्थान हैं। इस्कान के लिए इससे अच्छा स्थान क्या हो सकता है कि वह मायापुर में अपना विश्व-मुख्यालय बनाए। किन्तु विगत कई वर्षों में कई प्रयत्नों के बावजूद श्रील प्रभुपाद वहाँ सम्पत्ति प्राप्त नहीं कर सके थे।

वे १९६७ में अच्युतानन्द के साथ मायापुर गये थे, उन्होंने एक प्लाट देखा था और अच्युतानन्द से कहा था कि उसे प्राप्त करने की कोशिश करे। किन्तु अच्युतानन्द और प्लाट के मुस्लिम मालिक में कभी कोई समझौता नहीं हो सका था। प्रभुपाद के कुछ गुरु-भाइयों के पास मायापुर में अपने मन्दिर और प्लाट थे, लेकिन वे सहायता नहीं कर रहे थे। कुछ तो प्रभुपाद के विरुद्ध भी प्रयत्नशील थे। जब प्रभुपाद ने अपने एक गुरु-भाई को मायापुर लिखा कि वह प्लाट प्राप्त करने में अच्युतानन्द की सहायता करे, तो उसके सचिव ने उत्तर दिया था कि वह ऐसा करने में असमर्थ था। सचिव ने टिप्पणी की थी, "मायापुर में भूमि प्राप्त करने के लिए भाग्यशाली होना जरूरी है।"

प्रभुपाद ने अपने गुरु-भाई की असहयोगपूर्ण भावना की आलोचना की थी। वे धैर्य खो रहे थे, "हम मायापुर में भूमि प्राप्त करने में समर्थ क्यों नहीं हैं?" उन्होंने अपने शिष्यों से पूछा। "तीन सौ वर्षों से यह चल रहा है!" उन्होंने एक गुरु-भाई को पुनः लिखा।

> जहाँ तक भगवान् चैतन्य की जन्म-भूमि, श्री मायापुर के नाम प्रचार का प्रश्न है, यह हमारे विभिन्न साहित्यों और पुस्तकों में लगातार होता आया है। यदि आप कृपापूर्वक अपनी सुविधा से यहाँ आने का कष्ट करें, तो हम आपको दिखा सकते हैं कि हम भगवान् चैतन्य की जन्म-भूमि का प्रचार किस प्रकार कर रहे हैं। शायद आप जानते हैं कि मैंने संत श्रीपाद तीर्थ महाराज से मायापुर में एक भू-खंड के लिए प्रार्थना की थी, जिस पर मैं अपने पाश्चात्य शिष्यों के लिए निवास बना सकूँ, किन्तु उन्होंने मेरा प्रस्ताव ठुकरा दिया। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर चाहते थे कि अमेरिकन और योरोपीय भक्त मायापुर आयें और उनकी भविष्यवाणी अब पूरी हो गई है। दुर्भाग्य है कि वे कलकत्ता की सड़कों में भटक रहे हैं, क्योंकि मायापुर में उनके रहने के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं है। क्या आप समझते हैं कि यह ठीक है?

एक छोटे-से दल के साथ प्रभुपाद नवद्वीप के लिए ट्रेन में सवार हुए, जो मायापुर से कुछ दूरी पर गंगा के पार स्थित है। नवद्वीप में देवानन्द मठ के सदस्यों ने उनका स्वागत किया। रिक्शाओं में बैठकर देवानन्द मठ जाते हुए भक्त नवद्वीप के ग्राम्य वातावरण पर मुग्ध हो गये। वर्षा के कारण चारों ओर हरियाली का राज्य था और जब भक्त उष्ण-कटिबन्धी वनस्पति से रेखित सड़कों से आगे बढ़ रहे थे, तो उन्हें लगा कि भारत के विषय में उनकी रोमानी आशाएँ पूरी हो रही थीं। देवानन्द मठ में प्रभुपाद और उनके शिष्यों को विशेष प्रसाद और अच्छे आवास दिये गये।

तब वर्षा शुरू हो गई। हर दिन वर्षा होती रही और गंगा का जल-स्तर बढ़ता रहा, यहाँ तक कि उसकी तेज धारा को पार कर मायापुर जाना असम्भव हो गया। चूँकि वर्षा के शीघ्र बन्द होने की सम्भावना नहीं थी, इसलिए प्रभुपाद ने नवद्वीप से जाने का निश्चय किया। वे और उनके अनुयायी तड़के-सवेरे की गाड़ी पकड़कर कलकत्ता के लिए चल पड़े।

रेल-मार्ग जल में डूबा था। ट्रेन को बार-बार रुकना पड़ता था—एक बार तो उसे आठ घंटे से अधिक रुके रहना पड़ा। गरमी और यात्रियों की भीड़ के बार-बार ट्रेन के डिब्बे से आने-जाने से, भक्तों के लिए प्रतीक्षा का समय बड़ा कष्टकर हो गया। प्रभुपाद ने अपने एक भक्त से कहा कि वह रिक्शा से जाये और कलकत्ता जाने के लिए किसी अच्छी सवारी की व्यवस्था करे। लेकिन कोई भी सवारी उपलब्ध नहीं थी। अन्त में ट्रेन कलकत्ता की ओर बढ़ी, पर अगले स्टेशन पर वह रुक गई और सभी यात्री दूसरी ट्रेन में सवार हो गये। अन्ततः प्रभुपाद कलकत्ता पहुँचे और श्रीमान् दास गुप्त के घर गये।

"हो सकता है कि भगवान् चैतन्य नहीं चाहते कि हम अपना मुख्यालय मायापुर में स्थापित करें।" प्रभुपाद ने कहा। उनके मन में जो दो उद्देश्य—कलकत्ता में आवास-निर्माण और मायापुर में भूखंड क्रय—थे, वे पूरे नहीं हुए थे।

प्रभुपाद ने लोगों के घरों पर कीर्तन करना और अपने कमरे में अभ्यागतों से मिलना जारी रखा। एक दिन एक श्रीमान् दंधरिया उनसे मिले और उन्होंने बम्बई में आयोजित होने वाले एक साधु समाज की चर्चा की, जिसमें भारत के सर्व विख्यात साधु सम्मिलित होने जा रहे थे। साधु-समाज-सम्मेलन चौपाटी सागर-तट पर होने वाला था और उसके एक बृहत् सम्मेलन होने की आशा थी। श्रीमान् दंधरिया ने प्रभुपाद से उसमें शामिल होने की प्रार्थना की और प्रभुपाद ने उसे स्वीकार कर लिया।

• • •

बम्बई
अक्तूबर १९७०

प्रभुपाद के अनुरोध के उत्तर में कि उनके साथ कार्य करने को और अधिक शिष्य भारत आ जायें, बीस अमरीकी भक्तों का दल ब्रसेल्स पहुँचा और वहाँ से एक सस्ती उड़ान से बम्बई आ गया। हवाई अड्डे पर भक्तों की समझ में नहीं आ रहा था कि वे कहाँ जायें, तभी श्रीमान् दंधरिया के भतीजे और बम्बई के एक धनी व्यवसायी, श्रीमान् कैलाश सेक्सरिया, प्रभुपाद के एक पत्र के साथ उनके पास पहुँचे। श्रीमान् सेक्सरिया ने कई कारों की व्यवस्था की थी और वे भक्तों को उनमें बैठाकर मरीन ड्राइव स्थित बम्बई के सम्पन्न आवास-क्षेत्र में अपने घर ले गये। उन्होंने उन्हें भोजन कराया और रहने के लिए कमरे दिए।

दो दिन के बाद एक तार पहुँचा, जिसमें श्रीमान् सेक्सरिया और भक्तों के लिए सूचना थी कि प्रभुपाद अगले दिन आ रहे हैं। प्रभुपाद बम्बई हवाई अड्डे पहुँचे और उत्साहपूर्ण स्वागत के बाद वे श्रीमान् सेक्सरिया के साथ उनके घर गये।

मरीन ड्राइव का क्षेत्र सागर-तट के साथ-साथ चलता है और उसके किनारे के मकान अत्यन्त धनी लोगों के हैं। श्रीमान् सेक्सरिया का मकान सात-मंजिला था और उन्होंने प्रभुपाद को पहली मंजिल पर टिकाया, जिसमें अरबसागर दिखाई देने वाले बड़े-बड़े कमरे थे।

प्रभुपाद ने कहा कि बम्बई भारत का सर्वाधिक भौतिकतावादी नगर था। वह राष्ट्र के चलचित्र की राजधानी था और ऐसा नगर था, जहाँ अन्य भारतीय नगरों की अपेक्षा अधिकतर लोग पाश्चात्य वेशभूषा धारण करते थे। भारत का सिंहद्वार कहे जाने वाले इस नगर को अपने सबसे अधिक उद्योगों, व्यवसायों और विज्ञापन-पट्टों पर गर्व था। यह संस्कृतियों और धर्मों का मिलन-स्थल और एक सार्वभौम नगर था, किन्तु इसमें कलकत्ता का नक्सलवादी आतंक नहीं था, न ही नई दिल्ली का भारी-भरकम राजनीतिक वातावरण था। इसमें ऐसे अभिजात परिवार भी नहीं थे, जो भगवान् चैतन्य की उपासना करते हों या उनके संकीर्तन-आन्दोलन के अनुयायी हों। लेकिन प्रभुपाद का कहना था कि धर्मोपदेश के लिए यह अपनी ही उपयुक्तता रखता था। यह एक सम्पन्न नगर था, जिसमें ऐसे बहुत-से पवित्रात्मा नागरिक रहते थे, जो प्रबुद्ध थे और कोई भी अच्छा विचार अपनाने को तत्पर थे। प्रभुपाद ने भविष्यवाणी की कि कृष्णभावनामृत के लिए बम्बई एक अनुकूल नगर होगा।

बम्बई में प्रभुपाद का पहला धर्मोपदेश-कार्यक्रम साधुओं की एक सभा को सम्बोधित करना था। श्रीमान् सेक्सरिया के मकान से कुछ दूरी पर खुले मैदान में एक

पंडाल बनाया गया। प्रभुपाद के शिष्य भी सभा में आमंत्रित थे और वे प्रभुपाद से कई घंटे पहले पहुँच गये थे। भारतीय साधु लम्बी पंक्तियों में मंच पर बैठे थे; उनके जमघट से प्रभुपाद के शिष्य अचंभे में पड़ गये। कुछ साधु दाढ़ी रखे थे, कुछ के सिर घुटे थे, कुछ लम्बी जटाएँ रखे थे और त्रिशूल लिए थे, कुछ भभूत रमाए थे, कुछ के गले में मालाएँ थीं और शरीर पर मिट्टी पुती थी। अमरीकी भक्त आश्चर्यचकित थे, और बहुत-से साधू भी उन श्वेत-चर्म वैष्णवों को देखकर आश्चर्य में डूब गये। जब प्रभुपाद के भक्त-जन मंच पर आये और उन्होंने कीर्तन आरम्भ किया, तो उपस्थितगण ने लय-बद्ध तालियाँ बजाकर कीर्तन में भाग लिया। तत्पश्चात्, श्रीमान् सेक्सरिया के परामर्श पर भक्तगण कीर्तन करते हुए सड़कों पर चले गये। श्रोतागण में से बहुत से उनके पीछे हो लिए।

उसी संध्या भक्तजन प्रभुपाद के साथ पंडाल में फिर गये। प्रभुपाद ऊँचे मंच पर बैठे और भक्त उनके चरणों में बैठे। तीन भक्तों से अंग्रेजी में भाषण कराने के बाद प्रभुपाद ने हिन्दी में भाषण दिया और श्रोता-मंडली, जिसमें पाँच सौ से अधिक लोग थे, शान्तिपूर्वक सुनती रही। व्याख्यान के बाद प्रभुपाद मंच से नीचे उतरे और उनके चारों ओर जन-समूह इकट्ठा हो गया। लोग उनके पैर छूने लगे और कार तक उनके पीछे गये।

जब प्रभुपाद ने भक्तों से बम्बई की सड़कों में उनके स्वयं स्फूर्त कीर्तन के बारे में सुना, तो उन्होंने कहा कि उन्हें घने बाजारों में जाना और प्रतिदिन कीर्तन करना चाहिए। भक्तों ने ऐसा ही किया। जहाँ जन-समूह एकत्र होता था, भक्त वहाँ जाते थे और कीर्तन करते थे। वे शक्ति-सम्पन्न, युवा, स्फूर्तिमय और श्रद्धावान् थे और हर दिन तीन-चार घंटे सड़कों में कीर्तन करते थे।

यद्यपि प्रभुपाद अपने शिष्यों के साथ सड़कों में कीर्तन करने स्वयं नहीं जाते थे, किन्तु वे अपने निर्देशों के माध्यम से उनके साथ थे। शिष्यों के कीर्तन पर निकलने के पहले और उनके वापस आने पर भी वे उनके साथ होते थे। शिष्य कीर्तन कर रहे थे, क्योंकि प्रभुपाद ने उनसे ऐसा करने को कहा था। और वे जानते थे कि कीर्तन आत्मा की सहज क्रिया थी और हर एक को कीर्तन करना चाहिए। भक्त जानते थे कि जीवन के अन्त में वे अपने परम धाम परमेश्वर के पास लौटेंगे। और उससे भी अच्छा यह था कि दिन के अन्त में वे मरीन ड्राइव में प्रभुपाद के पास लौटेंगे, जो मुसकराएँगे और उनका उत्साह-वर्धन करेंगे।

• • •

आकाशवाणी और समाचार-पत्रों में पाश्चात्य भक्तों द्वारा नगर में कीर्तन करने के समाचार आने लगे थे। टाइम्स आफ इंडिया के १० अक्तूबर के संस्करण में एक लेख प्रकाशित हुआ :

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ, इस्कान के तत्त्वावधान में अमेरिकनों का एक दल, जिसमें गोद में बच्चे लिए महिलाएँ भी हैं, विगत कुछ दिनों से बम्बई में 'हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे, गाता हुआ और करताल, मंजीरें और मृदंग बजाता हुआ घूम रहा है।

क्या भौतिकतावादी पश्चिम या कम-से-कम उसका एक अल्प अंश, पूर्व की आध्यात्मिकता को अपनाने तो नहीं आ गया है? मेरी भेंट कई अमरीकी कीर्तनियों से हुई (जो यहाँ आज आरम्भ होने वाले अखिल भारतीय भारत साधु समाज के सातवें अधिवेशन में भाग लेने आये हैं) और मैं उनकी निष्कपटता और जो मत उन्होंने अपनाया है, उसके प्रति उनके एकान्त समर्पण से बहुत प्रभावित हुआ। मुझे विचार आया कि मथुरा के वैष्णव इतने निष्कपट नहीं हो सकते, जितना इन उत्साही भक्तों का दल है।

• • •

चौपाटी सागर-तट की बालुका बहुत बारीक और स्वच्छ थी। श्रोताओं की संख्या हजारों में थी। साधु-जन मंच पर बैठे थे। प्रभुपाद और उनके अनुयायी भी उनके साथ मंच पर बैठे थे। गोधूलि का समय था। अरबसागर के ऊपर का आकाश मेघाछन्न था और सुहावनी बयार चल रही थी।

मायावाद दर्शन की व्याख्या करने वाले दो व्याख्यान पहले हो चुके थे, और अब प्रभुपाद की बारी थी—वे उस सायं-सत्र के नियुक्त कार्यक्रम के अन्तिम वक्ता थे—श्रोता-मण्डली उन्हें सुनने के लिए उत्सुक थी। पश्चिम में उनकी उपलब्धियों से लोगों में बड़ी जिज्ञासा पैदा हो गई थी, विशेषकर इसलिए कि वे अब बम्बई पहुँच चुके थे और उनके भक्त प्रतिदिन सार्वजनिक स्थानों में कीर्तन कर रहे थे। प्रभुपाद के शिष्य पूर्वगामी दो घंटों के हिन्दी व्याख्यानों से ऊबकर थक चुके थे और उनके लिए प्रभुपाद को सुनने के लिए प्रतीक्षा करना कठिन था। किन्तु प्रभुपाद श्रोताओं को सम्बोधित करने के स्थान पर अपने शिष्यों की ओर मुड़े और बोले, "कीर्तन आरम्भ करो।"

भक्तों ने ज्योंही कीर्तन आरम्भ किया, छोटी बालिका सरस्वती खड़ी हुई और नाचने लगी। उसे देखकर अन्य भक्त खड़े हुए और नाचने लगे। मृदंगों और करतालों की ध्वनियों के बीच जब कीर्तन जोर पकड़ने लगा, तो भक्तों के नृत्य और कीर्तन से मंच पर बैठे कुछ साधुओं को बाधा-सी हुई और एक-एक करके वे मंच छोड़कर चले गये। लेकिन श्रोता-मंडली भक्तों का साथ उत्साहपूर्वक देती रही, और उसमें से बहुत-से खड़े होकर तालियाँ

बजाते रहे। पाँच मिनट तक भावविभोर होकर कीर्तन करने के बाद भक्तजन अकस्मात् अपने नीचे बालू पर कूद पड़े और श्रोताओं की ओर बढ़ने लगे। भीड़ में से हजारों खड़े हो गये और भक्तों के साथ आगे-पीछे झूमकर नाचने लगे।

भारतीय श्रोता इन विदेशियों की शुद्ध कृष्ण-भक्ति से अभिभूत होकर अनियंत्रित प्रसन्नता से चिल्लाने लगे। इसके पूर्व ऐसी चीज कभी नहीं हुई थी। पुलिस के सिपाही और प्रेस के संवाददाता कीर्तन में सम्मिलित हो गये और नाचने लगे। जब प्रभुपाद और उनके शिष्यों ने भगवान् चैतन्य के संकीर्तन-आन्दोलन की शक्ति का प्रदर्शन किया, तो चौपाटी सागर-तट हरे कृष्ण कीर्तन से गूँज उठा।

लगभग दस मिनट के बाद कीर्तन बन्द हो गया, यद्यपि बातूनी भीड़ में गहरी हलचल व्याप्त थी। पन्द्रह मिनट निकल गये, इसके पहले कि सब लोग अपने स्थानों को वापस जायें और कार्यक्रम आगे बढ़े। भक्त मंच छोड़कर, जमीन पर बैठ गये, केवल प्रभुपाद मंच पर आसीन थे। प्रभुपाद की आवाज ध्वनिप्रसारक यंत्र में से गूँजने लगी।

"महिलाओं और सज्जनों, मुझसे प्रार्थना की गई थी कि मैं हिन्दी में बोलूँ, लेकिन हिन्दी में बोलने का मुझे अच्छा अभ्यास नहीं है। इसलिए इस सभा के अधिकारियों ने मुझे अंग्रेजी में बोलने की अनुमति दी है। आशा है आप मुझे समझ सकेंगे, क्योंकि बम्बई में अधिकतर लोग अंग्रेजी बोलते हैं। जैसाकि इस संध्या के वक्ता, स्वामी अखंडानन्दजी ने आपको बताया है, समस्या यह है कि हम प्रत्येक व्यक्ति को सदाचार कैसे सिखा सकते हैं। मैं समझता हूँ कि इस युग में, जिसे कलियुग कहते हैं, बहुत-सी बुराइयाँ हैं।"

आगे बढ़ते हुए प्रभुपाद ने समझाया कि भगवान् चैतन्य के आन्दोलन में हर एक के हृदय को शुद्ध करने की शक्ति थी। उन्होंने जगाई और माधाई नामक उन बदमाशों की ओर संकेत किया, जिनका भगवान् चैतन्य ने उद्धार किया था।

"अब हम बड़े स्तर पर जगाइयों और माधाइयों की रक्षा कर रहे हैं। इसलिए, यदि हम शान्ति चाहते हैं, यदि हम सदाचार के मंच पर अपने आपको स्थापित करना चाहते हैं, तो हमें चाहिए कि हम हरिनाम महामंत्र का प्रसार सारे विश्व में करें। और व्यावहारिक रूप से यह सिद्ध किया जा चुका है। जो अमरीकी और योरोपीय वैष्णव यहाँ आये हैं, जिन्होंने अभी हरे कृष्ण मंत्र का संकीर्तन किया है—वे गोमांस भक्षण करने वाले, मदिरा पीने वाले, अवैध यौनाचार के पीछे फिरने वाले और हर तरह के जुआरी थे। किन्तु इस कृष्णभावनामृत आन्दोलन को अपनाने के बाद उन्होंने हर घृणित चीज छोड़ दी हैं। सदाचार अपने आप आ गया है। अब वे मांस-भक्षण नहीं करते, जुआ नहीं खेलते, अब वे अवैध यौनाचार के पीछे नहीं फिरते, अब वे नशीली चीजें नहीं खाते। वे चाय तक नहीं पीते, काफी तक नहीं पीते, बीड़ी-सिगरेट तक नहीं पीते। मैं समझता हूँ भारत में ऐसा

होना बहुत विरल है। लेकिन उन्होंने यह सब छोड़ दिया है। क्यों? क्योंकि उन्होंने यह कृष्णभावनामृत अपना लिया है।"

प्रभुपाद ने अपना व्याख्यान लगभग पाँच मिनट के बाद समाप्त कर दिया।

"मुझे नहीं लगता कि मुझे कुछ अधिक कहना है। आप देख सकते हैं कि कृष्णभावनामृत का क्या परिणाम है। यह कोई बनावटी चीज नहीं है। यह हर एक में वर्तमान है। मैंने कोई जादू नहीं किया है। वरन् यह कृष्णभावनामृत हर एक में वर्तमान है। हमें केवल उसे पुनर्जागरित करना है।"

श्रोता-मण्डली ने हर्ष और बार-बार करतल-ध्वनियों के साथ प्रभुपाद का अनुमोदन किया। शब्दाडंबरी मायावादियों की तुलना में प्रभुपाद ने अधिक शक्ति और वाग्पटुता के साथ दिखा दिया था कि आध्यात्मिक जीवन का सारभूत तत्त्व पवित्र नामों का आह्लादपूर्ण कीर्तन था। और जीवन्त प्रमाण के रूप में उन्होंने अपने अमरीकी शिष्यों को प्रस्तुत किया था।

अगले सप्ताह प्रभुपाद और उनके शिष्य बम्बई-भर में चर्चा के विषय बने रहे, और उन्हें सारे नगर के लोगों से व्याख्यान देने और कीर्तन करने के लिए आमंत्रण मिलते रहे। दि टाइम्स वीकली में साधु-समाज-अधिवेशन का जो विवरण प्रकाशित हुआ, उसमें श्रील प्रभुपाद और उनके शिष्यों की स्मरणीय उपस्थिति को प्रमुखता दी गई।

> बीस अमेरिकनों का दल, जो हरे कृष्ण प्रतिनिधि मंडल के सदस्य थे, मंच पर आसीन हुआ। वातावरण मृदंगों के स्वराघात और मंजीरों की झंकार और महामंत्र के संगीत से व्याप्त था। इस ओर से उस ओर झूमते हुए, हवा में शिखा फहराते हुए वे हरे कृष्ण गा रहे थे।...
>
> एक श्वेत-केश संवाददाता ने, जिसे मैं हमेशा से विशेष रूप से अभावुक व्यक्ति मानता था, मुझ से भावुकतापूर्ण स्वर में कहा, "क्या आप अनुभव करते हैं कि क्या हो रहा है? बहुत शीघ्र हिन्दुत्व पश्चिम पर हावी होने जा रहा है। हरे कृष्ण आन्दोलन हमारी उस सारी क्षति को पूरा कर देगा, जो शताब्दियों से पादरियों के हाथों हमें भोगनी पड़ी है।"

• • •

करीब पचीस संवाददाता श्रीमान् सेकसरिया के निवास-स्थान की पाँचवी मंजिल पर एक प्रेस कॉंफरेंस के लिए एकत्र हुए। प्रभुपाद अपने शिष्यों के साथ एक बड़ी-सी चटाई पर बैठे और उन्होंने प्रश्नों के उत्तर दिए और भक्तों ने सैन फ्रांसिस्को रथयात्रा का एक

चलचित्र दिखाया। संवाददाताओं ने न्यू वृन्दावन के बारे में पूछा। उन्होंने भक्तों से प्रश्न किये : वे साधु क्यों बन गये थे? वे अपना देश क्यों छोड़ आये थे?

अगले दिन समाचार-पत्रों में प्रभुपाद और उनके आन्दोलन के बारे में कहानियों की भरमार थी। दि टाइम्स आफ इंडिया ने एक विशेष दृष्टिकोण प्रस्तुत किया : "संयुक्त राज्य के करोड़पति के पुत्र की कृष्ण संघ में शान्ति की खोज।" लेख में वर्णन था कि गिरिराज अपने पिता की सम्पत्ति का त्याग करके प्रभुपाद के आन्दोलन में सम्मिलित हो गया था। एक समाचार-पत्र ने गिरिराज के शब्दों में लिखा, "मेरे पिता कडा परिश्रम करते हैं और अपार धन कमाते हैं। वे मेरी माँ से लड़ाई भी करते हैं। मेरी बहिनें घर से भाग गईं। इस तरह भौतिक सुविधाओं के होते हुए भी कोई प्रसन्न नहीं है।" श्यामसुन्दर के बयान से उद्धरण था : "मेरे पिता बहुत धनी हैं, लेकिन हर रात उन्हें नींद की गोलियाँ लेनी पड़ती हैं।" और इस तरह के अन्य लेख भी थे।

शीघ्र ही दि टाइम्स आफ इंडिया के 'पत्र स्तंभ' में पत्र प्रकाशित हुए।

> जहाँ तक मेरी जानकारी है, हरे कृष्ण आन्दोलन के ये विदेशी हिन्दू यहाँ के स्थायी मूल ब्राह्मणों और हिन्दुओं के बराबर नहीं हो सकते। उन्हें निम्न जातियों में स्थान देना होगा। यह महत्त्वपूर्ण है कि एक नये परिवर्तित साधु, श्री गोपाल दास ने जो पहले शिकागो का चार्ल्स पोलैंड था, कहा कि इसके पहले वह मजदूर था और वह शूद्र का कार्य करता था। इसलिए यह आवश्यक होगा कि इन विदेशी धर्मान्तरितों को उनके पेशे के अनुसार तीन नीची जातियों में से किसी में स्थान दिया जाये।

एक अन्य पत्र में कहा गया कि, "हरे कृष्ण आन्दोलन भावुकतावादियों की एक छिट-पुट सनक मात्र है।"

प्रभुपाद ने कहा कि ऐसे पत्रों का उत्तर दिया जाना चाहिए और उन्होंने उत्तरों की रूपरेखाएँ स्वयं तैयार कीं और खास-खास शिष्यों को उत्तर लिखने का काम सौंपा। कुछ ही दिनों में प्रभुपाद के उत्तर पत्रों में प्रकाशित हुए।

> भारत के विभिन्न प्रांतो में ब्राह्मणों के बीच भी परस्पर सामाजिक व्यवहार नहीं है। इसलिए ये विदेशी सामाजिक दृष्टि से स्वीकार किये जायें या न किये जायें, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, विभिन्न प्रान्तों में वकालत करने वाले योग्यता-प्राप्त वकीलों के बीच कोई सामाजिक व्यवहार नहीं है, लेकिन

> इसका यह तात्पर्य नहीं कि वे योग्यता-प्राप्त वकील नहीं हैं। यह एक सांस्कृतिक आन्दोलन है और यदि सारा संसार इस मत को स्वीकार कर लेता है, तो भारतीय ब्राह्मण इसे न भी स्वीकार करें, उससे कोई हानि नहीं होगी।... हम सामाजिक या राजनैतिक एकता के लिए प्रयत्न नहीं कर रहे हैं, लेकिन यदि कृष्णभावनामृत स्वीकार कर लिया जाता है, तो राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक एकता अपने आप हो जायेगी।...
>
> हमारा एक लड़का मजदूर था, इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वह शूद्र जाति का है। शूद्र वर्ग कम प्रबुद्ध या निरक्षर वर्ग है, जिसे जीवन के मूल्य का ज्ञान नहीं है। अमेरिका में सब से अधिक संस्कृत और शिक्षित व्यक्ति भी एक मामूली मजदूर का काम कर सकता है, क्योंकि यहाँ श्रम का गौरव स्वीकार किया जाता है। इसलिए यद्यपि एक लड़का अमेरिका में मजदूर का काम कर रहा था, वह शूद्र नहीं है।
>
> किन्तु यदि उसे शूद्र भी माना जाये, तो भगवान् कृष्ण कहते हैं कि जो कोई भी उनकी शरण में जाता है, वह सर्वोच्च पद प्राप्त करके परम धाम, परमेश्वर के पास, जाने का पात्र है।

गिरिराज द्वारा हस्ताक्षरित एक पत्र में प्रभुपाद ने इस आरोप का खंडन किया कि उनका आन्दोलन "भावुकतावादियों की एक स्फुट सनक" था।

> ...हमारे आन्दोलन को स्फुट कैसे कहा जा सकता है, जबकि यह विज्ञान *गीता* में पाँच हजार वर्ष पूर्व सिखाया गया था और इसकी शिक्षा, उसके लाखों वर्ष पूर्व सूर्य-देव को दी गई थी? इसे स्फुट कैसे कहा जा सकता है, जबकि हमारा कार्यक्रम सनातन-धर्म है—प्राणियों का शाश्वत व्यवसाय? क्या सनकियों के लिए सम्भव है कि वे पाँच वर्ष से अधिक समय तक मांस-भक्षण, मादक द्रव्य-सेवन, अवैध यौनाचार और द्यूत-क्रीड़ा छोड़े रहें? क्या सनकी लोग मित्रों और परिवार को छोड़ सकते हैं, धन का त्याग कर सकते हैं और नित्य सवेरे ४ बजे उठ सकते हैं और अपने गुरु की प्रार्थना पर तुरन्त संसार के किसी भी देश में जाकर किसी भी परिस्थिति में धर्मोपदेश करने के लिए तत्पर रह सकते हैं?

प्रभुपाद ने कृष्णभावनामृत आन्दोलन सम्बन्धी सभी समाचारों को कृष्णभावनामृत के प्रचार में सहायक के रूप में लिया। उन्होंने कहा कि कृष्णभावनामृत आन्दोलन की

आलोचना करके भी समाचार-पत्र कृष्ण के पवित्र नाम का प्रसारण कर रहे थे। और कृष्ण का नाम निरपेक्ष था।

श्रीमान् सक्सेरिया ने बम्बई के बहुत-से महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के लिए एक विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया। यद्यपि उन्होंने दो सौ से अधिक लोगों की आशा नहीं की थी, लेकिन आने वालों की संख्या उससे अधिक निकली। सभी बम्बई के अभिजात वर्ग के थे—महिलाएँ महंगी रेशमी साड़ियाँ और सोने तथा हीरे-मोती के आभूषण पहने थीं और पुरुष रेशमी नेहरू-कालर के सूट या कलफ की हुई श्वेत धोतियाँ और कुर्ते धारण किये थे।

प्रभुपाद ने अपने शिष्यों के साथ कीर्तन किया, और तब वे संक्षेप में गम्भीरतापूर्वक बोले, "आप सभी अत्यन्त बुद्धिमान लोग है," उन्होंने कहा, "आप सभी विद्वान और शिक्षित हैं। आप सभी महान् लोग हैं। मैं आपसे विनयपूर्वक याचना करता हूँ—मैं अपने दाँतों के बीच सड़क का एक तिनका लेकर याचना करता हूँ—कि आप हरे कृष्ण का जप करें। कृपा करके हरे कृष्ण का जप करें।"

व्याख्यान के बाद प्रभुपाद चले गये और भक्तों ने हरे कृष्ण आन्दोलन के संसार-भर के कार्यकलापों की स्लाइड दिखलाईं। उन्होंने लोगों से पहली बार सार्वजनिक रूप से आजीवन सदस्य बनने के लिए अपील भी की। श्रीमान् जी.डी. सोमानी, जो भारत के एक प्रमुख उद्योगपति थे, और श्रीमान् सेक्सरिया ने सदस्य बनने के फार्म पर हस्ताक्षर कर दिए।

• • •

यद्यपि प्रभुपाद यह देखकर प्रसन्न थे कि इस्कान के सदस्यों की संख्या में वृद्धि हो रही थी, लेकिन उन्हें इस बात की चिन्ता हो रही थी कि दाई निप्पान द्वारा जहाज से भेजी गई पुस्तकें अभी तक नहीं पहुँची थीं। भक्त आजीवन सदस्यों को पुस्तकें देने का वादा कर रहे थे, लेकिन ये पुस्तकें थी कहाँ? हर दिन समस्या संगीन से संगीनतर होती जा रही थी।

प्रभुपाद को मालूम हुआ कि कलकत्ता बन्दरगाह में हड़ताल चल रही थी। ऐसा लगता था कि उनकी पुस्तकें आ गई थीं, लेकिन कलकत्ता में जहाज से उन्हें उतारा नहीं जा सका और जहाज बन्दरगाह छोड़कर आगे बढ़ गया था। उन्हें चिन्ता होने लगी कि जहाज उनकी पुस्तकें किसी अन्य भारतीय बन्दरगाह में उतार देगा। पर पुस्तकें कहाँ थीं, इसका सही पता नहीं था और उनकी दशा भी अज्ञात बनी रही। प्रभुपाद बहुत चिन्तित हो गये। उन्होंने अपने योग्य शिष्य, तमाल कृष्ण को कलकत्ता भेजने का निर्णय लिया, ताकि वह जाकर कोशिश करे और पुस्तकों को गुम होने से बचा ले। इस बीच कृष्ण पर निर्भर

रहकर, वे धर्मोपदेश करते रहेंगे।

• • •

अमृतसर
अक्तूबर २१, १९७०

शिष्यों के एक दल के साथ, जिसमें सात पुरुष और दो महिलाएँ थीं, प्रभुपाद बम्बई से अमृतसर की दो दिन की ट्रेन की यात्रा पर निकले। वर्षों पहले प्रभुपाद धर्मोपदेश के लिए अकेले ही यात्रा पर निकले थे और *बैक टु गॉडहेड* के प्रकाशन और जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए उन्होंने ट्रेन से झाँसी, दिल्ली, कानपुर, कलकत्ता और बम्बई की यात्राएँ की थीं। पश्चिम में केवल पाँच वर्ष बिताने के बाद अब उन्हें कर्तव्यनिष्ठ शिष्यों के रूप में बड़ा लाभ मिल गया था और भारतीयों का ध्यान अब उन पर जाने लगा था।

उन्होंने अच्युतानन्द स्वामी, जयपताक स्वामी, हंसदूत और अन्यों को कलकत्ता में तथा तमाल कृष्ण, श्यामसुन्दर और औरों को बम्बई में ठहरा दिया था। उनके ये शिष्य आजीवन सदस्य बनाने और भारत के इन दो बड़े नगरों में इस्कान के स्थायी केन्द्रों की स्थापना करने में लगे थे। प्रभुपाद का कृष्णभावनामृत आन्दोलन भारत में आरम्भ हो रहा था और वे चाहते थे कि जहाँ कहीं भी धर्मोपदेश सम्भव हो, अपने शिष्यों के साथ वे वहाँ पहुँचे। जिस तरह उन्होंने अमेरिका में कार्य किया था, उसी तरह भारत में भी करेंगे—वे आराम से एक ही स्थान में नहीं ठहरेंगे, वरन् हमेशा यात्रा करते रहेंगे, कृष्ण के बारे में बोलते रहेंगे और नये लोगों से मिलकर उन्हें भाव-भक्ति का सन्देश सुनाएँगे।—इस तरह वे भारत में भी कार्यरत रहेंगे।

ट्रेन कुरुक्षेत्र स्टेशन पर पहुँची। "यहीं, निकट ही," प्रभुपाद ने कहा, "भगवान् कृष्ण ने पाँच हजार वर्ष पहले *भगवद्गीता* का उपदेश दिया था। लोग कहते हैं कि कुरुक्षेत्र का अस्तित्व नहीं है—वह एक काल्पनिक स्थान था। उनका कहना है कि वह शरीर के क्षेत्र और इन्द्रियों का एक प्रतीक था। वह स्थान एक रूपक मात्र था। लेकिन हम यहाँ उस स्टेशन पर खड़े हैं।" प्रभुपाद जब ये शब्द कह रहे थे, उस समय सूर्यास्त हो रहा था और उस समतल क्षेत्र के ऊपर आकाश चमकते हुए केसरिया रंग से दीपित था। "कैसे कहा जा सकता है कि कुरुक्षेत्र कोई वास्तविक स्थान नहीं है?" वे कहते गये, "यह हम लोगों के सामने है। और यह बहुत लम्बे अरसे से एक ऐतिहासिक स्थान रहा है।"

जब ट्रेन अमृतसर स्टेशन पर पहुँची, तब वेदान्त सम्मेलन समिति के सदस्यों ने प्रभुपाद का स्वागत किया और वे उन्हें और उनके शिष्यों को नगर के बाहरी इलाके में स्थित एक पार्क में ले गये। उन्होंने वेदान्त सम्मेलन के लिए निकेतन आश्रम द्वारा निर्मित

विशाल पंडाल प्रभुपाद को दिखाया और उनके तथा उनके शिष्यों के आवास के लिए तीन छोटे कमरे नियुक्त किये। प्रभुपाद एक कमरे में हो गये। दो महिलाएँ दूसरे कमरे में रुकीं, पुरुषों में से चार तीसरे कमरे में समा गये और शेष तीन बाहर चारपाइयों पर सोए। उत्तरी क्षेत्र होने के कारण पहली रात में ठंडक थी, बिस्तर कम थे और कोई भी भक्त अपने साथ गरम कपड़े नहीं लाया था।

अगले प्रात:काल, चार बजे भक्त राधा और कृष्ण के अर्चाविग्रहों की मंगल आरती और कीर्तन के लिए प्रभुपाद के कमरे में एकत्रित हुए—ये वही अर्चाविग्रह थे, जो प्रभुपाद के साथ पिछले डेढ़ वर्ष से यात्रा कर रहे थे। परिस्थितियों के कठोर होते हुए भी भक्त अपने आपको सौभाग्यशाली समझते थे कि उन्हें प्रभुपाद और राधा-कृष्ण के इतने निकट सम्पर्क में आने का अवसर मिला था। प्रभुपाद ने मृदंग बजाकर गुरु महाराज के प्रति गाई गई प्रार्थना का नेतृत्व किया। बाद में उन्होंने अर्चाविग्रहों को अभी-अभी अर्पित किये फलों और मिष्ठान्नों का थोड़ा-थोड़ा अंश पुजारी से हर भक्त को वितरित कराया। सूर्योदय अभी भी नहीं हुआ था और कमरा ठंडा था। क्योंकि भक्तजन एक-दूसरे से सटकर बल्ब के नीचे बैठे थे, प्रभुपाद ने उनसे जोर से *श्रीमद्‌भागवत* पढ़ने को कहा।

उसी दिन प्रात:काल प्रभुपाद वेदान्त सम्मेलन में सम्मिलित हुए। श्रोताओं में हजारों लोग थे, और चूँकि अधिकतर लोग अंग्रेजी नहीं समझते थे, इसलिए प्रभुपाद हिन्दी में बोले। उनके भाषण से हर एक प्रसन्न था, और समिति के सदस्यों ने उन्हें वेदान्त सम्मेलन का सभापति बनाकर उनका सम्मान किया।

यद्यपि कार्यक्रम केवल प्रात:काल और संध्या-समय कई घंटे चलता था, तथापि प्रभुपाद का धर्मोपदेश इसी समयावधि तक सीमित नहीं था। वे दिन भर धर्मोपदेश करते रहते थे। जब वे अपने कमरे में बैठे होते थे, तो उनका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए सैकड़ों धर्मपरायण हिन्दुओं का ताँता उनके यहाँ लगा रहता था। वैदिक संस्कृति के इस अवशेष को लक्ष्य करके उन्होंने अपने शिष्यों का ध्यान उधर आकर्षित किया। "जरा देखो," वे बोले, "ये लोग एक संत को कैसा सम्मान देते हैं।"

प्रभुपाद के पास हिन्दू परिवारों में जाने के लिए भी सामान्य आमंत्रणों की भीड़ लग गई। उन्होंने जितने भी आमंत्रण सम्भव थे, उन्हें स्वीकार किया—शिष्यों को लगा कि सम्भव से भी अधिक आमंत्रणों को।

प्रभुपाद ने अपनी गतिविधि तेज रखी। जब कारें आ जाती थीं, तब वे अपने कमरे से निकल पड़ते थे और चल देते थे; जो तैयार न होता उसे वे छोड़ देते थे। एक कार्यक्रम पूरा करने के बाद वे अपनी कार में सवार होते और सीधे दूसरे कार्यक्रम में पहुँच जाते थे। देर से आने वालों को कभी कभी सूचना मिलती कि वे जा चुके हैं। तब वे झपटकर

बाइसिकल अथवा रिक्शाओं में बैठते और उन्हें पकड़ने की कोशिश करते। यदि वे किसी गलत दिशा में चले जाते या कोई मोड़ लेने में चूक जाते, तो वे अगले कार्यक्रम को भी खो बैठते। और अन्त में जब वे उन्हें पा लेते, तो वे देखते कि प्रभुपाद या तो शान्ति और गम्भीरतापूर्वक *भगवद्गीता* पर प्रवचन करते होते या गृहस्वामी के साथ हँसते और प्रसाद ग्रहण करते होते।

हर दिन कम-से-कम आधा दर्जन कार्यक्रम रहते—"हमारे मन्दिर में दर्शन के लिए पधारिए," "हमारे मकान पर प्रसाद के लिए आइये।" और प्रभुपाद अपने आश्रम में जब भी वापस आते, तो वहाँ अभ्यागतों की एक लम्बी पंक्ति उनके साथ कुछ क्षण बिताने की प्रतीक्षा करती मिलती।

भक्तों में से कोई भी गतिशीलता और उत्साह में प्रभुपाद का मुकाबिला नहीं कर सकता था। उनकी शक्ति कभी कम होती मालूम ही नहीं होती थी। भक्तों के लिए एक दिन के अन्दर आधा दर्जन घरों में पूरे भोजन के लिए आग्रहपूर्वक आमंत्रित होना बहुत अधिक साबित हो रहा था। वे भूख से अधिक खा लेते थे और उनमें से कुछ बीमार पड़ गये। किन्तु प्रभुपाद परिस्थिति का दक्षतापूर्वक सामना करना जानते थे। वे हर गृहस्थ को पूर्ण संतोष देते थे, कृष्णभावनामृत के बारे में बोलते थे, कीर्तन कराते थे, थोड़ा-सा प्रसाद ग्रहण करते थे और आगे बढ़ जाते थे।

एक शाम को आमंत्रण स्वीकार करके प्रभुपाद बलदेव इन्द्र सिंह के घर गये। वे पंजाब के एक प्राचीन शासक के वंशजों में से थे। यद्यपि श्रीमान् सिंह साठ वर्ष के हो रहे थे, तथापि फिर भी वे हृष्ट-पुष्ट क्षत्रिय लगते थे। वे सुन्दर और लम्बे थे और लम्बी काली मूंछें रखे हुए थे। उन्होंने प्रभुपाद और उनके शिष्यों को अपना सुन्दर घर दिखाया, जिसमें उनके पूर्वजों के शिरत्राण और तलवार सहित सैनिक वेशभूषा में बड़े-बड़े चित्र टँगे थे। विजय स्मारक कक्ष में, जिसमें बहुत-से पशुओं की खालें और फूस से भरे हुए मृत सिर, दीवारों पर टँगे थे, श्रीमान् सिंह प्रभुपाद और उनके शिष्यों को अपने सबसे बड़े विजय-स्मारक, एक विशाल सिंह के सिर के सामने ले गये। प्रभुपाद उसके निकट चले गये, "आपने इसे मारा है?" उन्होंने पूछा।

"हाँ," श्रीमान् सिंह बोले और उन्होंने शिकार का पूरा विवरण दिया। उस नरहंता शेर ने पास के एक गाँव में बहुत-से लोगों को मार डाला था, श्रीमान् सिंह ने बताया, "इसलिए मैं गया और इसे गोली से मार डाला।"

प्रभुपाद के नेत्र विस्फारित हो गये, और वे अपने शिष्यों की ओर मुड़कर बाले, "ओह, बहुत अच्छा।"

उसके बाद प्रभुपाद एक कुर्सी पर आसीन हुए और श्रीमान् सिंह फर्श पर बैठे। उन्होंने

कहा कि उन्हें एक बात का कष्ट था। एक ज्योतिषी ने उन्हें बताया था कि अपने पूर्वजन्म में हजारों वर्ष पहले वे कुरुक्षेत्र के युद्ध में लड़े थे—लेकिन कृष्ण के पक्ष के विरोध में।

"यह सम्भव नहीं है," प्रभुपाद ने कहा, "कुरुक्षेत्र के युद्ध में जो कोई भी मौजूद था, उसका उद्धार हो गया था। यदि आप कुरुक्षेत्र के युद्ध में रहे होते, तो इस समय इस पार्थिव संसार में न होते।" श्रीमान् सिंह निश्चय नहीं कर सके कि उन्हें अपने आपको भारमुक्त अनुभव करना चाहिए या निराश। किन्तु प्रभुपाद ने उन्हें आश्वस्त किया, "सब ठीक है, आप चिन्ता न करें। अब आप कृष्ण के भक्त हैं।"

जब प्रभुपाद ने श्रीमान् सिंह से इस्कान का आजीवन सदस्य बनने को कहा, तो वे तुरन्त राजी हो गये। उन्होंने स्वीकार किया कि जब उन्होंने प्रभुपाद और उनके शिष्यों को आमंत्रित किया था, तो पहले उनके मन में वास्तव में सन्देह था, किन्तु श्रील प्रभुपाद के साथ कुछ मिनट बिताने के बाद उनकी शंकाएँ और सारे सन्देह जाते रहे थे। अमृतसर में इस्कान का पहला आजीवन सदस्य बनने में उन्हें प्रसन्नता थी।

• • •

यद्यपि भक्तों ने प्रभुपाद से कम ही कार्यक्रम स्वीकार करने की प्रार्थना की, किन्तु वे कम करने वाले नहीं थे। उन्होंने कहा कि उनके शिष्यों को उनकी तेज गतिविधि से कठिनाई हो रही थी। एक रात, आठवाँ और अन्तिम कार्यक्रम पूरा करने के बाद प्रभुपाद अपने कमरे में आधी रात से कुछ पहले लौटे। भक्तों के लिए वह दिन बहुत थकाने वाला था और वे यथाशीघ्र अपने बिस्तरों में जाना चाहते थे। प्रभुपाद के कमरे को तब भी प्रकाशित देखकर एक शिष्य खिड़की के पास गया। प्रभुपाद दीवार से झुके अपनी डेस्क के सामने बैठे थे और उस दिन दिए गये अपने एक भाषण का टेप सुन रहे थे।

• • •

एक दिन तीसरे पहर प्रभुपाद और उनके शिष्य सिखों का प्रसिद्ध स्वर्ण मन्दिर देखने गये। एक गाईड ने उन्हें सभी जगह घुमाया और प्रभुपाद के प्रश्नों के उत्तर दिए। गाइड ने बताया कि सिख व्यवसायी मन्दिर की देखभाल करते थे और उसका खर्च चलाते थे। सिखों को इस बात का गर्व था कि अमृतसर में कोई भूखा नहीं रहता था और वे हर दिन दस हजार लोगों को दाल और चपातियाँ खिलाते थे। प्रभुपाद को रुचि हुई और उन्होंने इस लम्बी प्रक्रिया का अवलोकन किया। उन्होंने देखा कि कुछ लोग चपातियाँ बेलकर उन्हें दक्षतापूर्वक एक विशाल तवे पर फेंकते थे, जबकि अन्य कुछ लोग, लम्बे चिमटों से उन चपातियों को पलटते थे, उन्हें थोड़ी देर तक आंच के ऊपर रखे रखते थे और फिर तह

लगाते जाते थे। "प्रसाद का वितरण इस तरह होना चाहिए," प्रभुपाद ने कहा।

प्रभुपाद ने अतिथि-पुस्तिका में हस्ताक्षर किये।—"ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी।" धर्म के नीचे उन्होंने लिखा—कृष्णैत। टिप्पणी के नीचे उन्होंने लिखा, "बहुत आध्यात्मिक।"

• • •

प्रभुपाद और उनके शिष्य रामतीर्थ सरोवर देखने गये, जहाँ अतीत के किसी युग में महान् संत वाल्मीकि का आश्रम था। रामतीर्थ सरोवर के चारों ओर की भूमि शुष्क और पथरीली थी और वहाँ वनस्पतियाँ बहुत कम थीं। जब वे रमणीय स्नान-घाट पर रुके, जिसकी सीढ़ियाँ सरोवर तक जाती थीं, तब भक्त प्रफुल्लित हो उठे; वे प्रसन्न थे कि अपने दिव्य पिता और गुरु के साथ वे बाहर भ्रमण पर निकले थे। शान्त सरोवर और उसका सुन्दर घाट प्रभुपाद के साथ होने के लिए आदर्श स्थल लगते थे।

भक्तजन भगवान् राम के बारे में बहुत कम जानते थे; जब प्रभुपाद श्री भगवान् के रामावतार की कुछ लीलाओं का वर्णन करने लगे, तो वे ध्यानपूर्वक सुनने लगे। प्रभुपाद ने बताया कि लौकिक लीलाओं के अन्तिम दिनों में राम ने सीता को वनवास दे दिया, जो उनकी शाश्वत पत्नी थीं। गर्भावस्था में और अकेली सीता ने वाल्मीकि के आश्रम में शरण ली, जहाँ उन्हें शीघ्र लव, पुत्र की प्राप्ति हुई। वाल्मीकि ने सीता के लिए तृण से एक अन्य पुत्र की सृष्टि की और उसका नाम कुश रखा।

जब सीता को ज्ञात हुआ कि राम एक अश्व चुनौती के रूप में विश्व के चारों ओर भेज रहे हैं, तो उन्होंने अपने पुत्रों को उसे पकड़ने का आदेश दिया। उन्होंने सोचा कि इस तरह वे अपने पिता को पकड़ेंगे और उन्हें उनके सामने लाएँगे। दुर्भाग्य से, जब दोनों भाई अपने लक्ष्य की पूर्ति में लगे थे, तभी उन्हें मालूम हुआ कि उनके पिता, भगवान् रामचन्द्र, संसार से प्रयाण कर गये हैं। दुख से सन्तप्त होकर वे वाल्मीकि के पास वापस गये। उनके वियोगजनित दुख को कम करने के लिए वाल्मीकि ने भगवान् राम के कार्यकलापों का दिव्य वर्णन करने वाली 'रामायण' का गायन करके उन्हें सुनाया। एक दिन जब सीता बाहर विचरण कर रही थीं, तो पृथ्वी फट गई और वे पृथ्वी में समा गईं, जहाँ से पैदा हुई थीं।

रामतीर्थ-सरोवर के घाट पर अपने अनुयायियों के साथ खड़े हुए प्रभुपाद ने बताया कि ये घटनाएँ आठ लाख वर्ष से अधिक पहले हुई थीं। भक्तों को लगा कि प्रभुपाद ने उनके लिए एक नये आध्यात्मिक लोक का द्वार उन्मुक्त कर दिया था।

• • •

वेदान्त सम्मेलन के व्यवस्थापकों ने प्रभुपाद और उनके दल से बार-बार आग्रह किया कि पंडाल के कार्यक्रम में वे अधिक भाग लें। निर्धारित भाषण अधिकतर मायावाद दर्शन पर होते थे : भगवान् निराकार हैं, सभी धर्म समान हैं और सभी ईश्वर तक ले जाते हैं, सब एक हैं, हम सब भगवान् हैं। ऐसी शुष्क मीमांसा श्रोताओं का ध्यान आकृष्ट नहीं कर सकती थी और सम्मेलन के संगठनकर्ता भक्तों से प्रतिदिन प्रार्थना करते थे कि वे पंडाल में कीर्तन करें। किन्तु वहाँ दूसरी तरह की इतनी अधिक भाषणबाजी हो रही थी कि प्रभुपाद ने नगर के निजी घरों में ही अपना अलग कार्यक्रम करना ठीक समझा।

एक भक्त ने प्रभुपाद से एक मायावादी नारे के बारे में पूछा, जो उसने इश्तिहार के रूप में कहीं लगा हुआ देखा था : नारा था—*तत् त्वम् असि*, उसका अंग्रेजी अनुवाद भी दिया गया था, "यू आर दैट टू" (तू भी वही है।) प्रभुपाद ने कहा कि निराकारवादियों का यह एक बहुत प्रिय नारा था। उनका विचार था कि हर प्राणी भगवान् है। उन्होंने भगवान् और प्राणी के बीच का अन्तर विस्तार से समझाया और बतलाया कि जब भगवान् प्रकट होते हैं, तो वे किस प्रकार कतिपय भ्रान्तिरहित विशिष्टताओं का प्रदर्शन करते हैं, जिनसे उनकी पहचान श्री भगवान् के रूप में होती है। "ये योगी केवल वेदान्त की ही बात करते हैं," प्रभुपाद ने कहा, "यह केवल दिमागी अटकलबाजी है और इससे वे कभी किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचते। वे सालों तक जीवन-भर इस तरह अनुमान लगाते रहते हैं, पर हम लोग खाते-पीते हुए ईश्वर की अनुभूति कर लेंगे।" और अपने सामने रखी प्रसाद की प्लेट से उन्होंने एक मिठाई उठाई और उसे अपने मुँह में डाल दी।

• • •

अमृतसर के अपने कार्यकलापों के बीच प्रभुपाद संसार के विभिन्न भागों की अपनी आध्यात्मिक संतानों के बारे में सोचते रहे और उन्हें नियमित रूप से लिखते रहे। कलकत्ता के भक्तों को उन्होंने लिखा, "मैं यह जानने को बहुत उत्सुक हूँ कि तुम लोग वहाँ क्या कर रहे हो और अब तक तुमने कोई आजीवन सदस्य बनाया या नहीं।" उन्होंने इस्कान को शासन से पंजीकृत करा लेने और कलकत्ता में स्थायी केन्द्र स्थापित करने को कहा।

बम्बई के अपने शिष्यों को उन्होंने लिखा, "मैं तुम लोगों की स्थिति जानने को बहुत उत्सुक हूँ; तुम लोग राम-मन्दिर में चले गये हो या इस समय तुम लोग कहाँ रह रहे हो?" करणधर को उन्होंने लास ऐंजिलेस लिखा,

> मुझे आशा है कि लास ऐंजिलेस के हमारे विश्व मुख्यालय में हर चीज ठीक चल रही है।

> मुझे अपने सामान्य कार्यकलापों... और गवर्निंग बाडी कमीशन के कार्यक्रम का विवरण भेजो। हमारे मन्दिरों के सभी सदस्यों को मेरा आशीर्वाद कहो। अर्चाविग्रहों की पूजा किस तरह चल रही है ?

फिजी द्वीप समूह से उपेन्द्र के पत्र का उत्तर देते हुए प्रभुपाद ने लिखा :

> जहाँ तक देवताओं की पूजा का प्रश्न है, हमारा पूरा हिन्दू समाज इस कार्य में डूबा है और जब तक कि हम बड़े जोर से धर्मोपदेश नहीं करते, तब तक इसको बन्द करना बड़ा कठिन है।

और न्यूयार्क में भवानंद को उन्होंने लिखा :

> संकीर्तन कार्यक्रम नियमित रूप से चलाओ; इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। जहाँ तक ब्रुकलिन के हमारे नये मन्दिर का प्रश्न है, कृष्ण ने तुम लोगों को सेवा का बहुत अच्छा अवसर दिया है।

• • •

अक्तूबर ३०, १९७०

अमृतसर में दस दिन रहने के बाद प्रभुपाद बम्बई वापस जाने के लिए ट्रेन पर सवार हुए। वे गुरुदास के साथ एक छोटे-से प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठे, जबकि उनके शेष शिष्य ट्रेन के दूसरे डिब्बे में बैठे थे। प्रभुपाद का डिब्बा इंजिन के पास था; इससे डिब्बे की चिमनी से उस में धुआँ आता था, जिससे प्रभुपाद पर सिर से पैर तक काले धब्बे पड़ गये।

यमुना : *हम अमृतसर और दिल्ली के बीच यात्रा कर रहे थे और मैंने जाकर देखने का निर्णय लिया कि प्रभुपाद क्या कर रहे थे और उन्हें किसी चीज की आवश्यकता तो नहीं थी (क्योंकि कभी कभी जब ट्रेन रुकती थी, तो वे किसी भक्त से प्लेटफार्म के खोमचेवालों से ताजे फल या अन्य वस्तुएँ खरीदने को कहते थे)।* इसलिए कौशल्या और *मैं कई डिब्बों को पार कर, प्रभुपाद के प्रथम श्रेणी के डिब्बे में गईं। वे कई तकियों पर पीठ के बल लेटे हुए, एक घुटना ऊपर उठाए हुए, राजा के समान दिख रहे थे।* उनके *चेहरे पर सुन्दर मुसकान थी।*

हमने उन्हें प्रणाम किया और उन्हों ने नेत्रों को झपकते हुए हम लोगों को देखा। "क्या कोई गरम चीज खाने को है ?" उन्होंने पूछा, *"आप क्या चाहते हैं ?"* मैंने कहा,

"श्रील प्रभुपाद, क्या आप चाहते हैं कि मैं आपका दोपहर का भोजन लाऊँ?" "नहीं," उन्होंने कहा, "भोजन नहीं, कुछ चावल, कुछ गरम चावल।" मैंने कहा, "आपका तात्पर्य क्या है, प्रभुपाद, क्या चावल ट्रेन से लाऊँ?" उन्होंने कहा, "नहीं, यदि तुम मेरे लिए कुछ गरम चावल तैयार कर सकती हो।" मैंने कहा कि मैं करूँगी।

मै नहीं जानती थी कि श्रील प्रभुपाद के लिए मैं गरम चावल कैसे तैयार करूँगी, पर कौशल्या के साथ मैं डायनिंग कार में गई। वहाँ कोई नहीं था, केवल दो व्यक्ति, जो काले कपड़े और हल्दी के दाग लगी निकर पहने थे, जलते कोयले की अंगीठी के पास खड़े हुए सिगरेट पी रहे थे। मैं हिन्दी बोलना नहीं जानती थी, लेकिन जितना हो सकता था, मैंने कोशिश की और कहा, "मेरे गुरु महाराज कुछ चावल चाहते हैं, कुछ गरम चावल।"

दोनों व्यक्ति हम पर हँसने लगे, जैसे हम पागल हों, और इसलिए मैंने सोचा कि अच्छा होगा कि हम किसी और को ढूँढें जो हमें अनुमति दे सके। लेकिन जब हमें रेस्टरां का मैनेजर मिला, तो उसने कहा, "नहीं, यह असम्भव है, आप चलती ट्रेन की किचेन में चावल नहीं पका सकतीं।" मैंने कहा, "मुझे खेद है, यह चावल मेरे गुरु महाराज को चाहिए। विकल्प का कोई प्रश्न नहीं है। मैं उनसे कह चुकी हूँ कि मैं चावल लाऊँगी और मुझे यह वचन पूरा करना है।" लेकिन मैनेजर ने फिर कहा, "नहीं, यह असम्भव है।"

मैं ट्रेन के कंडक्टर के पास गई और उसे स्थिति बताई। "यदि मैं अपने गुरु महाराज के लिए यह नहीं कर पाऊँगी," मैंने कहा, "तो मैं शायद ट्रेन से कूद पड़ूँगी।" कंडक्टर ने हम लोगों के शब्दों को संजीदगी से लिया और बोला, "ठीक है, ठीक है, आप लोग किचेन में जो चाहें पका सकती हैं।"

अस्तु, वह हम लोगों को ट्रेन की किचेन में वापस ले गया और किचेन के तथा रेस्टरां के मुख्य अधिकारी से बोला कि उसने हम लोगों को अनुमति दे दी हैं। अंगीठी बड़ी विशाल थी और मैं उसकी बिल्कुल ही अभ्यस्त नहीं थी। किचेन में हर तरह के अल्यूमिनियम के बर्तन और प्लेटें बिखरी हुई थीं। हमने एक बर्तन को, जितना हमसे हो सकता था, साफ किया, पानी उबाला और उसमें चावल डाला। एक बड़ी प्लेट-भर बहुत गरम चावल तैयार करके मक्खन, ताजे नींबू, नमक, और काले मिर्च के साथ हम उसे ट्रेन के अन्दर से ही अन्दर प्रभुपाद के डिब्बे में ले गये।

"आपके लिए चावल यह रहा, श्रील प्रभुपाद," प्रवेश करते हुए मैंने कहा। और उनके नेत्रों में प्रकाश आ गया और वे विस्फारित हो गये। उनका चेहरा मुसकान से भर गया। "ओह, मेरे भाग्य की देवियाँ आ गई हैं," उन्होंने कहा, "वे मेरा चावल लाई हैं। बहुत धन्यवाद। मैं यही चाहता था।" उन्होंने उस प्लेट से खूब जी-भरकर खाया। चावल के साथ उन्होंने थोड़ी कचौड़ी और पूरी भी ली, और थोड़ा अचार भी? वे बहुत प्रसन्न थे।

ट्रेन उसी रात नई दिल्ली स्टेशन पहुँची। स्टेशन पर भागते-दौड़ते यात्रियों के जमघट थे, चीजें बेचते खोमचेवाले थे, खान-पान के काउंटर थे, समाचार-पत्रों के स्टेंड थे, भिखारी थे और गंदे लाल जैकट पहने कुली थे। ट्रेन को बीस मिनट रुकना था।

अचानक प्रभुपाद के डिब्बे में एक व्यक्ति घुसा, जिसने अपना परिचय डी.डी. गुप्त नाम से दिया। यद्यपि प्रभुपाद उससे पहले कभी नहीं मिले थे, लेकिन दोनों के बीच पत्र-व्यवहार हो चुका था। वह दिल्ली का निवासी था, वह कोई विशेष प्रभावशाली या धनी व्यक्ति नहीं था, लेकिन वह सहायता करना चाहता था। प्रभुपाद को मिठाइयों का एक डिब्बा भेंट करते हुए उसने उन्हें दिल्ली में रुकने के लिए आमंत्रित किया। किन्तु प्रभुपाद अपनी योजना बना चुके थे और बम्बई के अपने भक्तों को अपने पहुँचने के बारे में तार भी भेज चुके थे।

प्रभुपाद ने गुरुदास की ओर देखा जो बड़ी प्रसन्नता अनुभव कर रहा था और अपने आपको विशेष सौभाग्यशाली समझ रहा था कि अपने गुरु महाराज के इतने निकट सम्पर्क में आने का उसे अवसर मिला था। उन्होंने एक ही डिब्बे में बारह घंटे एक साथ बिताए थे, एक साथ खाया-पिया था और वार्तालाप किया था। अभी कुछ ही मिनट पहले प्रभुपाद कृषि के महत्त्व पर बल दे रहे थे और समझा रहे थे कि किस प्रकार अन्नाभाव कुव्यवस्था के कारण था, न कि वर्षा के या जोतने-योग्य भूमि के अभाव के कारण। गुरुदास प्रसन्न था और प्रभुपाद के साथ यात्रा के अगले चरण की प्रतीक्षा में था। उसे मार्ग के दृश्यों को देखने और बम्बई वापस पहुँचने की प्रतीक्षा थी।

"यह व्यक्ति हम लोगों को आमंत्रित कर रहा है," प्रभुपाद बोले, "उतर जाओ और देखो कि तुम क्या कर सकते हो।"

"उतर जाऊँ?" प्रश्न पूछने या दिल्ली में क्या करना है, इस पर विचार-विमर्श करने को मुश्किल से कोई समय बचा था। ट्रेन शीघ्र जाने को थी। गुरुदास ने कहा कि वह रुक जायेगा, लेकिन उसे सहायता की आवश्यकता थी। वह और प्रभुपाद एक दल के बारे में सहमत हुए : यमुना (गुरुदास की पत्नी), गिरिराज, दुर्लभ, ब्रूस और गोपाल। गुरुदास दौड़कर यह समाचार अपनी पत्नी और ब्रह्मचारियों को बताने गया।

भक्तों को अपने हल्के थैलों को लेकर ट्रेन से उतरने में कोई कठिनाई नहीं हुई, लेकिन श्रील प्रभुपाद से अलग होने के कारण वे उदास थे। जब ट्रेन चलने लगी तो उन्होंने प्रभुपाद की खिड़की से उन्हें प्रणाम किया, हाथ हिलाकर उन्हें विदा दी और उनके अनुग्रह के लिए प्रार्थना की। प्रभुपाद जब पहली बार अमेरिका पहुँचे थे, उस समय जो कुछ हुआ था, उसकी तुलना में शायद यह अति-संयम सागर में बूँद के समान था।

• • •

बम्बई
नवम्बर १९७०

अगले महीने-भर प्रभुपाद और उनके शिष्य मनोहरलाल अग्रवाल के सीता-राम मन्दिर में चेम्बूर में रहे। वास्तव में यह श्रीमान् अग्रवाल का निवास था, लेकिन चूँकि वे सीता-राम अर्चाविग्रहों की पूजा करते थे, इसलिए अपने निवास को वे रामशरणम् कहते थे। प्रभुपाद एक कमरे में रुके और उनके शिष्य अन्य दो कमरों में, जिनसे रसोई-घर और स्नान-घर जाया जा सकता था। सीताराम मन्दिर और आसपास के उपनगरीय पड़ोस का वातावरण शान्त था और प्रभुपाद *श्रीमद्भागवत* के अपने कार्य में मनोयोगपूर्वक लग गये, इस्कान के संसार के सभी केन्द्रों से पत्र-व्यवहार करते हुए तथा अपने साथ रह रहे शिष्यों के छोटे-से दल की देखभाल करते हुए। उन्हें बड़ी आशा थी कि कृष्ण कोई मार्ग निकालेंगे, जिससे इस्कान भारत में भलीभाँति स्थापित हो जायेगा।

> इस समय हमारा खूब प्रचार हो रहा है और ऐसा समाचार है कि बम्बई का वातावरण अब कृष्णभावनामृत से व्याप्त हो गया है। यह सच है, और बम्बई समाज के महत्त्वपूर्ण सदस्य हमारे आन्दोलन को सराहने लगे हैं।
>
> इस समय मैं सभी स्वामियों से अधिक विख्यात हूँ। लोग समझने लगे हैं— ये स्वामी क्या हैं ? वे बाहर नहीं जा सकते। एक बंगाली कहावत है कि गीदड़ एक छोटे-से जंगल का राजा होता है। कहानी इस प्रकार है :—एक गीदड़ जंगल के अन्य जानवरों को मूर्ख बनाकर कुछ समय के लिए जंगल का राजा बन गया। लेकिन वह हमेशा गीदड़ ही बना रहा और उसके कपट का अन्त में पर्दाफाश हो गया।

यद्यपि श्रीमान् अग्रवाल अपने आपको सम्मानित और कृतज्ञ समझते थे कि प्रभुपाद ने उनका निमंत्रण स्वीकार किया था और वे अब उनके साथ अतिथि बनकर रह रहे थे, लेकिन प्रभुपाद जानते थे कि अन्त में उस स्थिति से सभी लोगों को असुविधा होगी। अपने घर में एक दर्जन अतिथियों को ठहराना और प्रतिदिन उन्हें भोजन कराना एक धनी व्यक्ति के लिए भी भार था; और भक्तों के लिए भी उन छोटे कमरों में रहना आसान नहीं था, उनके कार्य के घंटे कठिन और अनियमित थे, वे अक्सर बीमार पड़ जाते थे और उष्ण प्रदेशीय गरमी को सहन करना आसान नहीं था।

समस्या का समाधान यह था कि भक्तों को बम्बई में इस्कान केन्द्र के रूप में कोई अपना स्थान प्राप्त हो जाये। संन्यासी के रूप में प्रभुपाद कहीं भी रुकने को, यथावश्यक

और यथासमय स्थान बदलने को और दान स्वीकार करने को तैयार थे। अमेरिका जाने के पूर्व वे इस रूप में कई वर्ष बिता चुके थे। किन्तु अब उनके पास भारत में भरण-पोषण के लिए बीस आध्यात्मिक संतानें थीं और आगे और भी आने वाली थीं। वे परिपक्व नहीं थीं। वे उन्हें अपने निकट रखना चाहते थे, जिससे वे देख सकें कि उनके गुरु महाराज के कार्य का ढंग कैसा था और वे भारत में प्रचार की भावना को अपना सकें।

जब बम्बई नगर की एक हिन्दू संस्था ने कुछ शिष्यों से एक तीन-दिवसीय कार्यक्रम में सम्मिलित होने की प्रार्थना की, तो प्रभुपाद ने स्वीकृति दे दी। किन्तु कार्यक्रम के समाप्त हो जाने पर जब संस्था के प्रबंधकों ने शिष्यों को वहाँ अनिश्चित काल तक रुकने के लिए आंमत्रित किया, तो प्रभुपाद ने कहा, "नहीं, वे वहाँ केवल भोजन करेंगे और सोयेंगे" और अच्छा यही था कि वे "रामशरणम्" की भीड़-भाड़ में उनके साथ रहें।

सिन्धिया स्टीमशिप लाइंस की धनी डाइरेक्टर श्रीमती सुमति मोरारजी ने १९६४ ई. में प्रभुपाद के *श्रीमद्भागवतम्* के तीसरे खंड के प्रकाशन का खर्च उठाया था और १९६५ में प्रभुपाद की अमेरिका-यात्रा की निःशुल्क व्यवस्था की थी। अब उन्होंने प्रभुपाद को जुहू बीच के निकट सिंधिया हाउस में भाषण देने के लिए आंमत्रित किया। मंच पर बैठे हुए प्रभुपाद और श्रीमती सुमति मोरारजी प्रभुपाद की सफलता को लेकर पुरानी बातें करने लगे।

"मैं नहीं समझती थी कि आप जीवित वापस लौटेंगे," श्रीमती मोरारजी ने कहा, "पर आपको देखकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है।" प्रभुपाद अब वह अकिंचन साधु नहीं रह गये थे, जिससे श्रीमती मोरारजी की भेंट छह वर्ष पहले हुई थी। वे एक सफल व्यक्ति थे, और सुमति मोरारजी तथा उनके स्टाफ और मित्रों को पश्चिम में कृष्णभावनामृत आन्दोलन के बारे में जानकर प्रसन्नता हुई थी।

प्रभुपाद के भाषण के पहले तमाल कृष्ण ने श्रोताओं को उनका औपचारिक परिचय दिया। "प्रभुपाद ने इस नगर से पाँच वर्ष पूर्व पश्चिम के लिए प्रस्थान किया था। उनके पास कोई धन नहीं था। वे न्यूयार्क गये, जहाँ उन्होंने एक पार्क में एक वृक्ष के नीचे हरे कृष्ण कीर्तन किया। शीघ्र ही उन्होंने एक मन्दिर स्थापित किया, जहाँ वे कीर्तन करते रहे और वैदिक दर्शन पर कक्षाएँ लेते रहे। उनके पास बहुत-से लोग आये और क्रमशः उन्होंने नये केन्द्र खोले : सैन फ्रांसिस्को, मांट्रियल, बोस्टन आदि, आदि। अब उनके अनेक शिष्य हैं और चालीस से अधिक मन्दिर हैं। हर मन्दिर में संकीर्तन, अर्चाविग्रह-पूजन और प्रसाद-वितरण का पूरा कार्यक्रम चलता है। भारत ने पश्चिम को बहुत-से राजदूत और मंत्री भेजे हैं, लेकिन उनमें से कोई दावा नहीं कर सकता कि उसने अमेरिका निवासियों से मांस, मछली और अंडे खाना छुड़वा दिया और उनसे हरे कृष्ण कीर्तन कराया। हर एक श्रील

प्रभुपाद का ऋणी है, क्योंकि वे पतित आत्माओं के कष्टों का उद्धार करने के लिए आये..."

प्रभुपाद ने *ब्रह्म-संहिता* के तीन श्लोकों का गायन किया और श्रोताओं को सहगान में सम्मिलित होने को आमंत्रित किया : *गोविन्दं आदि पुरुषं तम् अहं भजामि।* आधे घंटे तक बोलने के बाद उन्होंने सुमति मोरारजी और सम्मान्य अतिथियों और अधिकारियों के साथ प्रसाद ग्रहण किया। वे डॉ. सी. बाली और उनकी पत्नी, प्रसिद्ध चलचित्र नर्तकी वैजयंती माला से मिले। उनके साथ उनकी केवल संक्षिप्त बातचीत हुई और वे इस्कान के आजीवन सदस्य बन गये।

वैजयंती माला : *प्रभुपाद अपने धर्मोपदेश को इतना सरल बना देते थे कि एक सामान्य व्यक्ति भी समझ जाता था कि हमारे महान् दर्शन और हमारी महान् शिक्षाओं का क्या तात्पर्य था। वे केवल भगवान् कृष्ण की महान् संस्कृति का प्रचार ही नहीं कर रहे थे, वरन् संसार के अन्य भागों के लोगों को उसकी अर्थवत्ता और महत्ता से भी सचमुच अवगत करा रहे थे। कृष्ण की अपनी सरल और फिर भी बहुत महान् शिक्षाओं के द्वारा वे इस सन्देश को इतनी दूर और इतने विस्तृत क्षेत्र में ले गये कि सचमुच यहा एक चमत्कार लगता है कि एक व्यक्ति अकेले ही इतना अधिक कर सका। आप जानते हैं कि उन्होंने केवल प्रचार ही नहीं किया, या इन सब चीजों के बारे में वे भाषण-भर नहीं करते रहे, वरन् संसार के इतने अधिक भागों में उन्होंने इतने अधिक केन्द्र स्थापित किये। वास्तव में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि सारी कठिनाइयों के होते हुए वे इतना अधिक कर सके। पर मेरी समझ में यह उनकी लगन और दृढ़ता थी, जो उन्हें आगे बढ़ाती रही।*

• • •

प्रभुपाद के शिष्यों द्वारा बम्बई की सड़कों और साधु-समाज में किये गये कीर्तन से उत्पन्न सार्वजनिक सनसनी समाप्त हो चुकी थी और उसके समाचार भी आने बन्द हो गये थे। तब भी बम्बई के बहुत-से महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों में प्रभुपाद की मांग थी। अमेरिका में उनकी पाँच साल की उपलब्धियों ने उनके प्रति प्रबुद्ध भारतीयों का सम्मान और ध्यान आकृष्ट किया था और उनसे मिलने के लिए प्रतिदिन कितने ही सम्मानित व्यक्ति आते थे, जो उन्हें कृष्णभावनामृत पर एक प्रामाणिक अधिकारी मानते थे। भारतीय जन प्रभुपाद को अद्वितीय मानते थे। ऐसी संस्कृति में जहाँ स्वामियों और पवित्र पुरुषों के साथ प्रायः सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाता है, उन्हें विशिष्ट समझा जाता था। उनसे मिलने वाले उन्हें अपने घर आने और उसे पावन करने के लिए आग्रह किया करते थे। और यह प्रभुपाद की आकांक्षाओं के अनुकूल भी था। वे चाहते थे कि भारतीय हरे कृष्ण कीर्तन में

लगें, *भगवद्गीता* का दर्शन सुनें और भगवान् के प्रसाद का आदर करें। वे चाहते थे कि लोग कृष्णभावनामृत आन्दोलन की पवित्रता को समझें; इस्कान के आजीवन सदस्य बनें और बम्बई में एक विशाल केन्द्र स्थापित करने में उनकी सहायता करें।

भारतीयों को धर्मोपदेश देते हुए प्रभुपाद प्रायः उनसे आग्रह करते कि वे अपनी विस्मृत-प्राय आध्यात्मिक संस्कृति की ओर लौटें। "हमारी संस्कृति कृष्णभावनामृत है," बम्बई के नागरिकों के एक दल के सामने उन्होंने कहा, "लेकिन हम उसे भूल रहे हैं और भौतिकता में बहुत अधिक लिप्त होते जा रहे हैं। भगवान् ऋषभदेव कहते हैं कि यह अच्छा नहीं है, क्योंकि कर्म के नियमानुसार आपको दूसरा शरीर ग्रहण करना पड़ेगा। किन्तु आपको सांसारिक जीवन के लिए अपने कठिन संघर्ष का त्याग नहीं करना है। अर्जुन को ऐसा करने की शिक्षा नहीं दी गई थी। वह अपनी स्थिति में बना रहा और उसने कृष्णभावनामृत का अनुसरण किया।" प्रभुपाद अन्त में बोले, "मैं याचना कर रहा हूँ। पश्चिम में मेरे बयालीस मन्दिर हैं और हर मन्दिर में पचास से लेकर सौ तक शिष्य हैं। हजारों पुस्तकों का प्रकाशन होना है। कृपया इस आन्दोलन में मेरी सहायता कीजिए।"

• • •

'रामशरणम्' के मनोहरलाल अग्रवाल प्रभुपाद के साथ प्रायः घंटों बैठते और आध्यात्मिक जीवन के बारे में उनसे जिज्ञासाएँ करते। श्रीमान् अग्रवाल को प्रभुपाद के अमेरिका में किये गये कार्य के बारे में सुनने में विशेष रुचि थी : उन्होंने इतने अधिक ईसाइयों को राम-भक्त कैसे बनाया? क्या वे अकेले थे, या उनके सहायक भी थे? वे अमेरिका में कैसे कपड़े पहनते थे? वे लोगों से कैसे मिलते थे? प्रभुपाद ने न्यूयार्क के लोअर ईस्ट साइड में किये गये प्रारम्भिक कीर्तन का विवरण दिया और बताया कि किस तरह हर चीज कृष्ण की इच्छा से घटित होती रही थी।

श्रीमान् अग्रवाल ने शंका व्यक्त की कि पाश्चात्य लोग कृष्णभावनामृत में अधिक देर तक अटल रहेंगे। "अभी आपके साहचर्य के प्रकाश में," उन्होंने कहा, "जब तक पार्थिव रूप में आप मौजूद हैं, वे सारे बन्धनों को स्वीकार करते रह सकते हैं। किन्तु जब आपका पार्थिव प्रभाव नहीं रह जायेगा, जब आप एक दिन इस संसार से चले जायेंगे, तब क्या ये सारे लोग जो आपके सम्पर्क में आये हैं, खराब हो जायेंगे?"

"नहीं," प्रभुपाद ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"आपका दावा बड़ा लम्बा है," श्रीमान् अग्रवाल ने उत्तर दिया। "क्या आप बता सकते हैं कि आपके दावे का मूल आधार क्या है?"

प्रभुपाद ने श्रीमान् अग्रवाल को याद दिलाया कि उनके सभी शिष्य हरे कृष्ण मंत्र के

जपने में दीक्षा प्राप्त कर चुके थे और वैदिक धर्मशास्त्रों के अनुसार ईश्वर के पवित्र नाम का निरन्तर जप पतित से पतित आत्माओं को बचा लेता है और पुनः पतन से उनकी रक्षा करता है। प्रभुपाद ने भविष्यवाणी की कि उनके इस संसार से प्रयाण के पश्चात् भी उनके शिष्य माया के आखेट नहीं बनेंगे, जब तक कि वे निर्धारित जप करते रहेंगे।

एक दिन श्रीमान् अग्रवाल ने जानना चाहा कि प्रभुपाद और उनके शिष्यों की कब तक रुकने की योजना थी। प्रभुपाद ने कहा कि जहाँ वे रुके थे, वहाँ वे बहुत प्रसन्न थे, किन्तु एक नया आवास पाने का प्रयत्न वे तुरन्त शुरू करेंगे। श्रीमान् अग्रवाल ने बल देकर कहा कि उनका इरादा प्रभुपाद से जाने के लिए कहने का नहीं था; उनका घर प्रभुपाद का घर था, उनका नहीं। उन्होंने प्रभुपाद से प्रार्थना की कि वे कृपापूर्वक वहीं ठहरे रहें।

प्रभुपाद ने कहा कि उससे उन्हें चैतन्य चरितामृत की एक घटना याद हो आई थी, और उन्होंने भगवान् चैतन्य के महान् भक्त हरिदास ठाकुर की एक कहानी सुनाई। हरिदास ठाकुर एक गुफा में अकेले रहते थे, जहाँ वे दिन-रात हरे कृष्ण जपते रहते थे। बहुत-से यात्री उनके दर्शन के लिए वहाँ जाया करते थे, लेकिन जब उन्हें मालूम हुआ कि गुफा में हरिदास ठाकुर के साथ एक अजगर भी रहता था, तो वे डर गये। यद्यपि हरिदास ठाकुर अपनी गुफा से सन्तुष्ट थे, किन्तु वे अपने दर्शनार्थियों को असुविधा में नहीं डालना चाहते थे, इसलिए उन्होंने कहा कि वे गुफा का त्याग उसी दिन कर देंगे और फिर कभी नहीं लौटेंगे। जब वे अभी यह बात कह ही रहे थे कि वह विशाल अजगर गुफा के पीछे से चक्कर लगाता हुआ सबके सामने आ गया। हरिदास ठाकुर के निकट सरककर अजगर ने उन्हें सिर झुकाया और वहाँ से खिसक गया। अजगर के हृदय में स्थित परमात्मा ने उसे गुफा छोड़ने के लिए प्रेरित किया, जिससे हरिदास ठाकुर वहाँ रह सकें।

कहानी कहते-कहते प्रभुपाद हँसे। "अग्रवाल जी," वे बोले, "आपने वही कहा है। आपने कहा है कि आप चले जायेंगे और हम रहेंगे। किन्तु नहीं, नहीं, हम चले जायेंगे। चले जायेंगे।" ●